
छाया
मोतीलाल वयम्

छाया

(कश्मीरी नाटक)

मोतीलाल क्यमू

अनुवादक

हरिकृष्ण कौल

मूल्य : प्रथम संस्करण : 1975 © अकादमी

प्रकाशक : ललितकला, संस्कृति तथा साहित्य अकादमी, जम्मू

मुद्रक : बाहरी पब्लिकेशंज़ (प्रा) लि०, द्वारा स्पार्टन प्रिन्टर्स
57, सन्त नगर, नई दिल्ली 24.

Chayya—A Kashmiri Drama by M.L. Kemmu.

आमुख

'छाया' एक ट्रैजडी है—एक युग, एक समाज की ट्रैजडी जो विश्वास, आस्था और श्रद्धा पर ही जिन्दा रहता है। वैचारिक धरातल पर यह एक आधुनिक ट्रैजडी है। प्रत्येक साहित्यकार अपने लेखन में समकालीन मूल्यों को प्रतिबिम्बित करता है। इन मूल्यों के केन्द्र में वह स्वयं होता है और अपने इर्द गिर्द ही वह अपने विचारों का एक मंडल रचता है। भले ही वह पुरातन युग की कोई कथा प्रस्तुत करे, या इतिहास से कोई घटना लेकर अपने साहित्य का सृजन करे, वह समसामयिक प्रभावों से मुक्त नहीं रह सकता। कभी-कभी कोई समसामयिक विचार या मूल्य दर्शाने के लिए ऐतिहासिक व्यक्ति, घटना या कथा ही सशक्त माध्यम रहती है। और उन मूल्यों का नये सिरे से मंथन कर लेखक वस्तु और शिल्प के स्तर पर अपना दृष्टिकोण अच्छी तरह प्रस्तुत कर पाता है। संसार की विकसित भाषाओं में आधुनिक युग में रचित और अभिनीत अनेक प्रसिद्ध नाटकों की यही पृष्ठभूमि है।

'छाया' मैंने सन 1966 में लिखा था। तबसे लेकर आज तक मैं उस में बराबर संशोधन करता रहा हूं। नाटक की कथा-वस्तु का बीज मुझे कल्हण की राजतरंगिणी के एक श्लोक में मिला। ललितादित्य कश्मीर से सेना लेकर निकला और आर्याणक के निर्जन हिम-विस्तार में नष्ट हो गया। यह भी कहा जाता है कि उसने जीते जी चिता पर बैठ कर स्वयं को भस्म कर डाला। कल्हण की मान्यता है कि महाराज ललितादित्य के पास दिव्य शक्ति थी।

इन्हीं दिव्य शक्तियों के भरोसे जो आधुनिक युग में भी जीवित रहता है, ट्रैजडी के अतिरिक्त उसका ठौर और कहाँ हो सकता है ?

जून, 1972

—मोती लाल क्यम

पात्र

भूपत

चन्द्र

रक्षपाल, रक्षक

राजमाता

मंजरिका

वृध्दा

वर्ध्दमान

भिक्षु सर्वजन मित्र

राजगुरू

कुछ सैनिक तथा ब्राह्मण

प्रथम अंक

महाराज ललित दित्य के राजभवन का एक भाग। मंच की बाईं ओर वह द्वार है जो इस भाग को भवन के निचले खंड से जोड़ता है। दाहिनी ओर वृताकार सीढ़ियाँ और उनके पीछे एक वातायन। मंच की बाईं ओर, सीढ़ियों की सीध में, ऊपर के खंड में जाने का मार्ग है। मंच के अग्र भाग में एक चौकी है जो किसी विशेष शिला से निर्मित दीखती है।

भूपत : (ऊपर के खंड से उतरते और मुद्राएं गिनते हुए)

पचीस और पाँच हुए तीस। तीस और पाँच पैंतीस। पाँच। चालीस। अंह! (मुद्राएं थैली में डालकर) और पाँच। पचास।

चन्द्र कुछ घबराया हुआ उसे पुकारता हुआ प्रवेश करता है।

चन्द्र : भूपत! भूपत!!

भूपत : (वृताकार सीढ़ियों के पास पहुंचकर) और पाँच।— कौन?

चन्द्र : भूपत ! (बाँह फैलाकर अपने सामने भाला तानता है)

भूपत : हां। क्या चाहिए ? क्या बात है ? तुम उद्विग्न क्यों हो ?

चन्द्र : बाहिर सारा परिहासपूर उद्विग्न है।

बाहर से आने वालों का कोलाहल का शोर उभरता है।

भूपत : क्या ? (कान देकर) क्यों ? कारण ?

चन्द्र : सभी नगरवासी घबराये हुए हैं ! कोलाहल नहीं सुनते आप ?

भूपत : यह हल्ला किस बात पर ?

चन्द्र वृताकार सीढ़ियाँ चढ़ कर वातायन के पट खोलता है। संध्या ढलने का आभास। कोलाहल कुछ तीव्र होता है।

चन्द्र : महाराज का वाहन हाथी—गजेन्द्र पगला गया है।

भूपत : अरे ! गजेन्द्र पगला गया है ? (तनिक रुककर) पर तुम क्यों घबराये हो ?

चन्द्र : पूछते हैं घबराया क्यों हूँ ? आइये देखिये राजभवन के बाहिर क्या स्थिति है ?

भूपत वृताकार सीढ़ियाँ चढ़कर वातायन के बाहिर झाँकता है।

भूपत : किन्तु ?—किन्तु फिर भी क्या हुआ ?

चन्द्र : क्या हुआ ? देखिए लोगों में क्या भगदड़ मची है हाट बन्द हो गई। लोग अपनी अटालिकाएं छोड़कर भाग रहे हैं। घरों के दार-झरोखे सभी ने बन्द कर दिए हैं।

भूपत : (सक्रोध) रक्षक गरभ कहाँ है ? क्या कर रहे हैं वे ?

चन्द्र : वे उसे वश में करने निकल पड़े।

भूपत : उनमें से कोई भी उसे वश में नहीं कर सकता !

चन्द्र : क्या कोई भी नहीं ?

भूपत सीढ़ियां उतरता है।

भूपत : कोई भी नहीं।

चन्द्र भी भूपत के पीछे पीछे उतरता है।

चन्द्र : तो क्या यह मदमत्त हाथी सारी नगरी को उजाड़ देगा ? राज विहार की पुष्प वाटिका को नष्ट कर देगा ? वृक्ष लताएं उखाड़ देगा ?

भूपत चन्द्र के समीप आकर उसके कंधो पर हाथ रखता है।

भूपत : चन्द्र ! मेरे एक प्रश्न का उत्तर दो !

चन्द्र : कौन सा प्रश्न ?

भूपत : यह किसका षड़यन्त्र है ? किसे ऐसी मूर्खता करने का साहस हुआ ?

चन्द्र : कैसा षड़यन्त्र? मैं कुछ नहीं जानता।

भूपत दूसरी ओर मुड़ता है।

भूपत : (बड़प्पन दिखाकर) चलो, तुम अभी बच्चे हो। तुम्हें अभी युद्ध देखना है, संसार देखना है, देश विदेश घूमना है।

चन्द्र : क्या गजेन्द्र वश में नहीं होगा ?

भुपत : (चन्द्र के निकट आकर) और नहीं तो क्या सदा मत्त रहेगा ?

निचले खंड से उल्का लेकर रक्षक का प्रवेश। भूपत और चन्द्र उसका नगाड़ा सुनते हैं। वह दीपक जलाता है।

रक्षक : सावधान ! गजेन्द्र नाम का हाथी श्रृंखला तोड़कर पशु-शाला से भाग निकला है। राजादेश है कि जब तक यह हाथी वश में नहीं किया जाता, कोई भी व्यक्ति राजभवन से बाहर न निकले।

भूपत : रक्षापाल। कौन महानुभाव गजेन्द्र को वश में करने चला है ?

रक्षापाल : महाराज के मंत्री महावीर मित्र शर्मा।

भूपत वृताकार सीढ़ियां चढ़ता है।

भूपत : वे उसे वश में नहीं ला सकते।

चन्द्र : क्या ? वे उसे वश में नहीं ला सकते ?

भूपत : (मुड़कर) नहीं। कदापि नहीं !

चन्द्र : तो फिर आप ही गजेन्द्र को वश में क्यों नहीं लाते ? आप भी अपने को बलवीर मानते हैं !

भूपत : नहीं, मुझ से भी यह नहीं हो सकता ।

पृष्ठ भूमि में कोलाहल उभरता है । तुरही और नगाड़े की आवाज़ । चन्द्र और भूपत झरोखे से बाहिर देखते हैं ।

रक्षापाल : आप दोनों यहीं ठहरिए । मैं देखकर आता हूँ कि गजेन्द्र किस ओर निकल पड़ा । सावधान : (प्रस्थान)

चन्द्र वृताकार सीढ़ियों से उतरता है ।

चन्द्र : वह हाथी इस लुभावनी और शोभाशाली परिहासपुर नगरी को उजाड़ तो नहीं देगा ? पुष्पवाटिकाओं की सुन्दरता मिट्टी में तो नहीं मिला देगा ? ओह ! मैं यह विनाश लीला नहीं देख सकता !

भूपत चन्द्र के पीछे पीछे सीढ़ियाँ उतरता है ।

भूपत : (सक्रोध) किन्तु तुम्हें इसकी चिन्ता क्यों ?

चन्द्र : क्यों न हो ? क्या मैं इस नगरी का निवासी नहीं ? मैं यह विनाश लीला नहीं देख सकता । महाराज ललितादित्य ने कोटि मुद्राएं लुटा कर इस नगरी का निर्माण किया । विहारों व मन्दिरों से इसे भर दिया । इसी नगरी की शोभा क्या एक पगला हाथी मिटा देगा ?

भूपत : यह तो कुछ भी नहीं हुआ। हुँ ! (रुक कर) जिस समय असंख्य लोग, अपार सेना, अनगिनत हाथी पगला जायेंगे तथा पगला कर एक दूसरे के सिर काटेंगे, एक दूसरे को रोंद डालेंगे, एक दूसरे के हेतु भूखे सिंह बन जायेंगे—उस समय तुम क्या कहोगे ?

चन्द्र : वह युद्ध है।

भूपत : उस समय तुम काँप नहीं उठोगे ? थर्रा नहीं जाओगे ? भयभीत नहीं होगे ? हाथ से भाला छूट नहीं जायेगा ? रथ से गिर नहीं पड़ोगे ? हाथी की चिंघाड़ सुनकर होश नहीं उड़ जायेंगे, घोड़े की चीख़ों से टाँगें लड़खड़ा नहीं जायेंगी ? शत्रु की लोह भुजाएं देखकर सुवर्ण से विवर्ण नहीं हो जाओगे !

चुप्पी

चन्द्र : चुप क्यों हो ? विनाश लीला तो वह होगी और उसी लीला का एक अधम पात्र बनने के लिये तुम महाराज की सेना में आ गये हो। अभी तो तुम एक हाथी के पगला जाने से डर गये ! हुँ!!

ऊपरी खंड से घबरायी हुई राजमाता किसी को पुकारती आती है।

राजमाता : कुमार ! कुमार !

भूपत और चन्द्र उसे देखकर झुकते हैं और फिर पूर्ववत खड़े रहते हैं।

राजमाता : भूपत, सुनती हूँ कुमार गजेन्द्र को वश करने चला है। तुम जाकर शीघ्र उसे ढूंढ लाओ। मेरा हृदय काँप रहा है।

भूपत : राजादेश है कि कोई भी राजभवन से बाहिर नहीं निकले। कुमार कैसे निकले ?

राजमाता : किसे मालूम कैसे निकला। तुम जाओ और उसे खोज लाओ।

भूपत : मैं चला, राजमाता !

भूपत झुकता है और फिर चला जाता है।

राजमाता : चन्द्र, यह हाथी कैसे पशुशाला से भागने में समर्थ हुआ ?

चन्द्र झुकता: है। फिर पूर्ववत खड़े होकर बोलता है।

चन्द्र : माता, मैं अपनी माता का आर्शीवाद लेकर घर से इधर ही आ रहा था कि देखा लोगों में भगदड़ मची है। हाथी अपनी सूंड नचा नचाकर दौड़ रहा था। रक्षक पीछे पीछे दौड़ रहे थे। माता यह हाथी वश नहीं होगा ?

राजमाता : होगा। किन्तु कुमार कहाँ गया ? उसे किसी ने क्यों नहीं रोका ?

राजमाता वातायन से बाहिर झांकती है।

चन्द्र : माता, आप चिन्तित क्यों होती हैं ! कुमार अकेले नहीं

होंगे। कहते हैं मंत्री मित्र शर्मा स्वयं गजेन्द्र को वश करने के हेतु निकले हैं।

चन्द्र वृताकार सीढ़ियाँ चढ़ने लगता है।

राजमाता : हाय ! सन्ध्या-वेला भी ढलने लगी। जाने कुमार इस हाथी के पीछे पीछे कहाँ कहाँ मारा मारा फिरेगा ?

चन्द्र : (वातायन के पास से) माता, देखिये जलती उल्काएं हाथ में लिये रक्षक राजमार्ग के पग पग पर खड़े हैं।

राजमाता : (मुड़कर) मगर इस रात्रि के अंधकार में वह हाथी के पीछे पीछे कहां कहां मारा मारा फिरेगा ? यह अबोध बालक थोड़े ही उस मदमस्त हाथी को वश में कर पायेगा !

चन्द्र : (मुड़कर) माता, कुमार अकेले नहीं हैं। सेनापति और मंत्री पहले ही गजेन्द्र को वश में करने चले हैं। सम्भव है उन्होंने उसे वश में कर लिया होगा।

भूपत का प्रवेश। राजमाता को नमण करता है।

भूपत : गजेन्द्र अभी तक भी निरंकुश ही घूम रहा है, राजमाता ! कुमार उसके लौटने की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

राजमाता : तो वह नहीं लौटा ? उसे कहो तुरंत यहां आये !

भूपत : माता, मैंने उनसे निवेदन किया। आप की चिन्ता का वर्णन किया। किन्तु उन्होंने यहाँ आने से इन्कार किया। उन्हें विश्वास है कि मंत्री गजेन्द्र को अवश्य वश करेंगे।

चन्द्र नीचे आता है।

चन्द्र : मंत्री उसे वश कर सकेंगे ?

राजमाता : कुमार के साथ और कौन कौन है ?

भूपत : भंडारकर और रक्षक ।

राजमाता : हाय, कुमार कितनी असावधानी बरत रहा है । कल महाराज सारी सेना लेकर आर्याणक देश की ओर प्रस्थान करेंगे और राजत्व का भार कुमार के सुकुमार कंधों पर पड़ेगा ।

राजमाता ऊपर जाने लगती हैं ।
भूपत वृत्ताकर सीढ़ियों की ओर आता है ।

भूपत : राजमाता ! आज्ञा हो तो कुछ प्रार्थना करूँ ।

राजमाता : कौनसी प्रार्थना?

भूपत : मुझे लगता है कि जब तक महाराज स्वयं गजेन्द्र को वश में करने नहीं निकलेंगे, तब तक वह मत्त ही रहेगा ।

राजमाता : किन्तु—किन्तु तुम नहीं जानते कि महाराज इस समय किस दशा में हैं ।

भूपत : महाराज के शत्रुओं को क्या कष्ट है ?

राजमाता : कल प्रात:काल सेना सहित आर्याणक देश की ओर प्रयाण की सारी व्यवस्था करके महाराज ने मदिरा पान किया है । उन्हें इस दशा में गजेन्द्र के मत्त होने का समाचार देना बैठे बिठाये घोर विपत्ति को निम-जल देने के समान होगा ।

भूपत : : ओह ! किन्तु मेरा मन कहता है कि जब तक महाराज न गजेन्द्र की ओर दृष्टिपात करेंगे तब तक उस मत्त दंति को वश में करने के लिए किया जाने वाला परिश्रम निरर्थक रहेगा ।

राजमाता : परन्तु गजेन्द्र किस ओर गया है, यह कौन जानता है ?

भूपत : अभी अभी वह वितस्ता की ओर भाग रहा था। मुझे पूर्ण विश्वास है कि महाराज की दृष्टि मात्र से उसका वशीकरण होगा। उसका सारा मद उड़ जायगा।

चन्द्र : (सामने आकर) आपको पूर्ण विश्वास है ?

भूपत : हाँ ! पूर्ण विश्वास ।

चन्द्र : माता, भूपत की बात की ओर तनिक ध्यान दीजिये ।

राजमाता : सम्भव है इस बात में कुछ सार हो। महाराज स्वयं गजेन्द्र को वश में करें—इस के लिये मैं पूरा यत्न करूँगी ।

धीरे धीरे ऊपर की ओर जाने लगती है। भूपत और चन्द्र झुक कर प्रणाम करते हैं।

भूपत }
चन्द्र } महाराज ललितादित्य को लोमश ऋषि की आयु मिले ।

यह कह कर दोनों सीधे खड़े हो जाते हैं और फिर रंग मंच के अग्रभाग की ओर आते हैं।

चन्द्र : भूपत, क्या यह सम्भव है कि महाराज गजेन्द्र की ओर देखभर

लें और वह वशीभूत हो जाय ?

भूपत : अवश्य !

चन्द्र : हुँ। अविश्वसनीय बात !

भूपत : तुम्हें अविश्वसनीय बात लगती है परन्तु मुझे पूर्ण विश्वास है।

चन्द्र : आपकी सभी बातें तो विश्वास मात्र हैं ! मानता हुँ कि महाराज सर्वाधिकार हैं किन्तु क्या मदमत्त हाथी को वे केवल अपनी एक दृष्टि से वश में कर पायेंगे ?

भूपत : महाराज की दैव शक्ति तो उस समय भी प्रकट हुई थी जब वे कलिंग देश वालों के साथ युद्ध कर रहे थे। और उन समय भी जब उन्होंने सिकता सागर को अपने अमल से बेधकर जलधारा बहाई और प्यास से मरते लोगों की वाक्य रक्षा की।

चन्द्र : (आस्चर्य से) और कलिंग-देश में क्या किया ?

भूपत : एक दिन महाराज को सेब खाने की इच्छा हुई। अन्य देश तथा ॠतु में यह फल भला कहाँ से आता ?

चन्द्र : फिर ?

भूपत : सभी मन्त्री चिन्ता से व्यग्र हो गये। करते भी क्या ? किन्तु तभी शत्रु पक्ष का एक वृद्धजन हाथ में सेब लेकर उपस्थित हुआ और महाराज को फल भेंट करके चला गया।

चन्द्र : महाराज में ऐसा क्या है ?

भूपत : कोई अद्भुत शक्ति जिसने बड़े-बड़े राजाओं को महाराज के चरण चूमने पर विवश किया। अब तक अनेक देशों को जीत चुके हैं और कभी भी पराजित नहीं हुए।

चन्द्र : तो क्या महाराज मदमत्त हाथी को केवल अपनी एक दृष्टि से वश में कर सकते हैं ?

भूपत : अवश्य ।

चन्द्र : (आश्वस्त होने पर प्रसन्न होकर) तो कल हम आर्यणिक देश की ओर प्रयाण करेंगे । सारी सेना और सारे हाथी-घोड़े लेकर। एक विशाल चतुरंगिणी सेना । सबसे आगे होंगे स्वयं गजारोही महाराज ।

भूपत : और मैं अपने जीवन में तीसरी बार ऐसी विशाल सेना का साथ दूंगा ।

चन्द्र : तीसरी बार ? महाराज के इस प्रयाण में सम्मिलित होना आपके लिये कष्टदायक तो नहीं होगा ? और फिर इस आयु में ?

भूपत : कर भी क्या सकता हूं ? महाराज की आज्ञा पालन ही मेरा कर्तव्य है। कश्मीर में रहते हुए राजभवन की रक्षा और कश्मीर से बाहिर स्वयं महाराज की रक्षा। मेरे भाग्य में यही लखा है।

चन्द्र : और हम दोनों आर्याणक से सकुशल लौटेंगे ?

भूपत : चन्द्र ! तुम्हारी इन बांहों में कश्मीरी रक्त बह रहा है । वही रक्त जो इस देश के अन्न जल से गरिमा प्राप्त करता है। (चन्द्र की बांहें उठाकर) इन लोह-भुजाओं पर केवल विश्वास की आवश्यकता है। आवश्यकता है कि इस वक्ष के भीतर एक बलबीर का हृदय हो। पगों में दृढ़ संकल्प हो। (मुस्कराता है)

बाहर कोलाहल कुछ तीव्र हो जाता है ।

चन्द्र : गजेन्द्र को वश में किया गया क्या ?

वातायन क पास जाकर देखता है और भूपत से कहता है।

चन्द्र : देखिए भूपत ! गजेन्द्र अभी तक मत्त है और फलपुर की ओर भाग रहा है। उलका लिए रक्षक उसके पीछे पीछे दौड़ रहे हैं।

वापस मुड़ता है।

यह अभी भी वश में नहीं हुआ ?

भूपत : (चन्द्र के निकट आकर बड़प्पन से) मन को थोड़ा शांत रखो। तुम घबराये से क्यों हो ? सच कहो, इस अभियान के साथ नहीं जाना चाहते हो ?

चन्द्र : मेरे मन में जाने के लिए उत्साह है। मैं चाहता हूं कि देश-विदेश घूमूं, युद्ध लडुँ और युद्ध जीतुं। किन्तु मैं अपनी मां का इकलौता बेटा हूं उसका हंसता, रोता और मुझे आशीर्वाद देता मुख हर समय मेरी आँखों के आगे रहता है।

भूपत : बस ! जब तुम इस अभियान के साथ चलोगे और पीरपंचाल के दुर्गम विस्तार को पार करोगे, तुम्हारा हृदय पत्थर बन जायेगा और दूध के घूंटों का मोह शेष नहीं रहेगा।

दोनों हंसते हैं। रक्षपाल का प्रवेश।

रक्षपाल : भूपत, गजेन्द्र गोवर्द्धन पठार की ओर भाग गया। सेनापति वर्द्धमान उसे वश में करने के हेतु फलपुर के मार्ग से गये हैं।

भूपत : कुमार कहाँ हैं ?

रक्षपाल : वे गजेन्द्र के पगला जाने के कारणों की खोज में लगे हैं।

भूपत : कहीं ऐसा न हो कि हमारे किसी शत्रु ने सिर उठाया हो। हमारे अभियान के समय जानबूझ कर बाधाएं खड़ी तो नहीं की जा रही हैं ?

रक्षपाल : कौन जाने !

हाथी की चिंघाड़ तथा लोगों का शोर। नगाड़े का शब्द भी सुनाई पड़ता है। चन्द्र वातायन की ओर जाने लगता है।

चन्द्र : अरे, लगता है ये फिर इधर ही आ रहे हैं।

वातायन से बाहिर झांकता है और प्रसन्नता से वापस मुड़ता है।

भूपत, आइये, देखिए हाथी क्या कर रहा है ? अपनी सूंड उठा कर जैसे राजमन्दिर को प्रणाम कर रहा है।

रक्षपाल वातायन की ओर जाता है।

भूपत : अच्छा ! महाराज ने निःसंदेह हाथी पर दृष्टिपात किया होगा।

वातायन की ओर बढ़ता है। हाथी का चिंघाड़ना बंद हो जाता है। महाराज की जय जयकार का स्वर उभरता है।

रक्षपाल : देखिए, सेनापति वर्द्धमान उसे बांध रहा है।

चन्द्र : (प्रसन्न होकर) तो हाथी वश में आ ही गया। गज़ेन्द्र वशीभूत हो कर ही रहा।

भूपत : इसका मद उतर गया।

चन्द्र : महाराज की दृष्टि का प्रभाव पड़ा होगा।

भूपत : अवश्य !

रक्षपाल : इसे सेनापति वर्द्धमान ने वश में किया होगा। श्रृंखला की एक छोर अभी तक उसके हाथ में है।

चन्द्र : देखिए, गजेन्द्र फिर सूंड उठाकर झुकाता है। मानों हमें ही प्रणाम कर रहा है।

तीनों वातायन के बाहिर झाँकते हैं।
ऊपर से राजमाता का आगमन।

राजमाता : भूपत, ईश्वर ने तुम्हारी ही सुनी। ज्योंही स्वामी ने गवाक्ष से गज़ेन्द्र की ओर देखा, वह मदमत्त हाथी गोवर्धन पठार से तुरन्त लौटा। महाराज की दृष्टि ने ही उसे वश में किया।

चन्द्र : राजमाता ! यह सब हमने स्वयं अपनी आंखों से देखा।

भूपत, रक्षपाल, चन्द्र : हमारे महाराज ललितादित्य लक्षायु हों !

राजमाता ऊपर जाने लगती हैं।

राजमाता : भूपत, कुमार आये तो उसे मेरे पास भेज देना।

शेष वातायन से वृत्ताकार सीढ़ियों तक लौटते हैं।

भूपत
रक्षपाल
चन्द्र
: कुमार चिरायु हों !

भूपत : अवश्व भेज देंगे, राजमाता !

राजमाता ऊपर जाने लगती है।
शेष सीढ़ियों से नीचे उतरते हैं।

भूपत : चन्द्र। तुम जाकर कुमार से कहो कि राजमाता की इच्छा है कि वे राजभवन लौट आयें।

चन्द्र : अवश्य।

निकलने लगता है। पर सहसा मुड़ता है।

भूपत : वापस क्यों फिरे ? क्या कोई छींका ?

चन्द्र : यदि एक बात पूछूँ बुरा तो नहीं मानेंगे ?

भूपत : तुम्हारी किसी भी बात को मैं बुरा नहीं मानता। पूछो !

चन्द्र : क्या महाराज की दृष्टि ने ही गजेन्द्र को वश किया होगा ?

भूपत : क्या तुम्हें विश्वास नहीं होता ? सुना नहीं तुमने राजमाता क्या कहती थीं ?

चन्द्र : किन्तु···किन्तु क्या यह सम्भव है ?

बड़प्पन की मुद्रा धारण किए भूपत चन्द्र के निकट आता है।

भूपत : संसार में कुछ भी असम्भव नहीं है। महाराज ने आज तक जो भी चाहा, प्राप्त किया। कहो, उनके इस राज्य में कौन

दुखी है, दीन है ? कहो, किस ब्राहमण को, किस भिक्षुक को, किस तपस्वी को तपस्या में कष्ट मिला ?

चन्द्र जैसे स्तब्ध रह जाता है।
फिर कहता है।

चन्द्र : इस दुर्गम हिम विस्तार को पार करने से, या वर्षा हिमपात या प्रचंड घाम में निज गृह से बहुत दूर एक पड़ाव से दूसरे पड़ाव तक भटकने से, रोग पीड़ा से—क्या कोई भी राजा की इच्छा से दुःख नहीं भोगता ? क्यों ?

भूपत : प्रत्येक अपने कर्मों का ही फल भोगता है।

चन्द्र की ओर पीठ करता है।

चन्द्र : हुँ ! कोरा दर्शन ! निरा तत्व ज्ञान !

चन्द्र दुखी होकर निकलता है।
भूपत मुस्कराता है।

भूपत : हुँ ! कैसा युवक है यह चन्द्र ! मन में जहां जीने के लिये उत्कट लालसा है वहां शंका आशंका भी है। इसे महाराज की दैवी शक्ति में आस्था नहीं है। वास्तव में यह अभी तक भी मां के लाड प्यार से अपने को मुक्त नहीं कर पाया है। अभी इसका शैशव नहीं गया। अभियान के साथ प्रस्थान को तत्पर पर मन में यह भय है कि सकुशल लौटना भाग्य में होगा या नहीं।

रक्षपाल : तो इसने कौनसा पाप किया ? क्या एक ऐसे ही अभियान ने उससे उसका पिता नहीं छीना है ?

भूपत : घर से निकलने पर अपना अधिकार है, घर लौटने पर नहीं।

रक्षपाल : कौन अपने घर से निकलता ! परन्तु जब राजा के सैनिक बन गये, जहाँ भी जाने का आदेश मिलेगा, जाना ही पड़ेगा ।

भूपत कुछ पग मंच के अग्रभाग की ओर बढ़ाता है ।

भूपत : राजा और राजा में अन्तर होता है, रक्षपाल ! महाराज ललितादित्य की सेना के एक साधारण सैनिक होना भी बहुत बड़ा सौभाग्य है ।

रक्षपाल भी मंच के अग्रभाग की ओर आकर कहता है ।

रक्षपाल : दो बार यहाँ से चलकर जब मैं जीवित यहाँ लौटा, मैंने सच मुच अपने को सौभाग्यशाली जाना । किन्तु इस बार मनमें शंशा सी उभर रही है ।

भूपत सहसः रक्षपाल के आगे खड़ा हो जाता है ।

भूपत : कैसी शंशा है ?

रक्षपाल धीरे धीरे बोल कर पीछे हटता है ।

रक्षपाल : आज तक हम जिस दिशा से भी गये, उसे शोभित करके ही लौटे । जितने भी युद्ध किये, जीतकर ही लौटे । परन्तु इसबार जिन मार्गों पर चलना होगा उन पर अपना हितैषी, मित्र, सहायक कौन होगा ?

भूपत : महाराज को किसी हितैषी, मित्र या सहायक की आवश्यकता नहीं है। सारी सेना को केवल उनकी शक्ति में विश्वास होना चाहिए।

रक्षपाल : उस विश्वास का अभाव किस में है? प्रत्येक सेवक, प्रत्येक सैनिक महाराज को देव तुल्य मानता है।

भूपत : तो फिर मन को किस शंका ने घेर रखा है?

रक्षपाल : अपनी आयु देखकर कंपकपी छूटती है। इसलिये इस अभियान के समय मलिन मन में शंका सिर उठाती है।

भूपत : शंका छोड़ कर अपने मन में विश्वास, आस्था और शुचिता को स्थान दो।

रक्षपाल भूपत की ओर बढ़ता है। उधर से मंजरिका का प्रवेश।

मंजरिका : वहाँ कौन है? अरे, भूपत! स्वामी इधर तो नहीं आये?

भूपत : नहीं देवी, वे यहां नहीं आये। सुना है गजेन्द्र को वश में करने के लिये गये थे।

मंजरिका : किन्तु गजेन्द्र तो वश में आ गया!

भूपत : जानता हुँ देवी! किन्तु सेनापति यहां नहीं आये।

मंजरिका : ओह! उनका आजाना अत्यावश्यक है।

भूपत : फिर वे अवश्य यहां आयेंगे। महाराज के साथ उन्हें मंत्रणा करनी होगी।

मंजरिका : तुम जाकर देखो वे कहां हैं?

भूपत : संदेश क्या दूँ ?

मंजरिका : कहो, मानवीय पुरजनों की इच्छा है कि महाराज से कल प्रातःकाल अभियान पर जाने के विचार को तिलांजलि देने के लिये विनती की जाये ।

सभी विस्मित हो जाते हैं ।

भूपत : देवी ! आप यह क्या कह रही हैं ?

मंजरिका : विज्ञ जनों का कहना है कि कल प्रातःकाल का प्रस्थान, राजा और प्रजा, दोनों के लिये अशुभ होगा ।

भूपत : राज ज्योतिषी द्वारा निर्दिष्ट महूरत अशुभ कैसे हो सकता है, देवी ?

मंजरिका : उनका कहना है कि आज संध्या समय गजेन्द्र का पगला जाना अपशकुन है ।

भूपत : अपशकुन ? अपशकुन !—ओह ! सेनापति वर्द्धमान यह बात महाराज से नहीं कह सकते । कदापि नहीं । रक्षपाल, आप जाकर सेनापति से कह दें कि वे इधर आजायें ।

रक्षपाल चला जाता है । भूपत मंजरिका से कहता है ।

देवी, आप यह बात राजमाता से कहें । केवल वही महाराज से यह सब कह सकती हैं ।

मंजरिका : किन्तु आदरणीय पुरजन स्वामी से मिल कर महाराज से विनती करना चाहते हैं ।

भूपत : ये आदरणीय पुरवासी महाराज का विश्वास नहीं करते क्या ? महाराज ने क्या कभी कोई ऐसा कार्य किया है जिससे जनता दुखी हुई हो ?

मंजरिका : (क्रोध से) तुम कैसी बातें कर रहे हो ? क्या मात्र तुम ही इस अभियान के साथ जा रहे हो ? तुम्हें पाषाण ले जाना है अथवा तुम्हारा हृदय ही पाषाण है !

भूपत चुपचाप पीछे हटता है।

क्या कभी भी युद्धों में घायलों के घाव देखकर तुम्हारा हृदय नहीं पिघला है ? वर्षों तक अपने घर बार, अपने इस देश से दूर रहकर क्या कभी तुम्हें अपने प्रियजनों, बाल बच्चों, नाती पोतों की याद नहीं आई है ? तुम्हें अभियानों के साथ दिन में अनेक कोस चलने के उपरान्त सांझ समय क्या कभी भी यह लालसा नहीं हुई है कि कोई अपने कोमल करों से तुम्हारे पाँव पखार ले ? तुम्हारी थकान हर ले। सुनो, प्रत्येक नारी इस आशा में जीवित रहती है कि शाम को उसका पति घर लौटेगा। वह उसके पाँव धोने का सौभाग्य प्राप्त करेगी। कहो, कल मेरे स्वामी जब यहाँ से चलेंगे तो मेरे पास कब लौटेंगे ? मेरी लालसा कब पूरी होगी ?

भूपत : (डरते डरते) देवी, आपके स्वामी की गणना उन वीरों में होती है जिन्होंने अपना जीवन स्वदेश और महाराज की सेवा में अर्पण किया है।

मंजरिका : और मैं केवल एक काठ की पुतली हूँ ! जाने मैं अपना यौवन चिंताओं और आशंकाओं में गंवाने के लिए जीवित हूँ या कोई अनिष्ट देखने के लिए !

भूपत : देवी, आप चिंतित क्यों हैं ? सेनापति वर्द्धमान सदृश बलवीर इस पृथ्वी पर दूसरा नहीं होगा। उन्हें किस बात का भय हो सकता है ?

मंजरिका : किन्तु मैं उन्हें अशुभ घड़ी और अमंगल वेला में घर से निकलने नहीं दूँगी।

भूपत : आप किस आमंगल और अपशकुन की बात कर रही हैं? गजेन्द्र तो कब का वश में आगया है।

मंजरिका : ओह, तुम जान बूझ और देख सुनकर अन्धे बन रहे हो? नहीं जानते कि इस समय आकाश में एक धूमकेतु उदित हुआ है?

भूपत : क्या कहा? धूमकेतु!

भूपत सहसा सीढ़ियाँ चढ़कर वातायन से झाँकने लगता है।

भूपत : किन्तु यहाँ से तो कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा है।

मंजरिका : तुम पूर्व दिशा की ओर देख रहे हो। धूमकेतु का उदय उत्तर दिशा में हुआ है।

भूपत : क्या राजज्योतिषियों को धूमकेतु के उदय का ज्ञान नहीं था?

मंजरिका : धूमकेतु का उदय-अस्त उनके ज्ञान से बाहिर की बात है। इसीलिये विज्ञ जनों का मत है कि कल सेना प्रस्थान न करे।

भूपत : आप की बात उचित है। किन्तु मैंने महाराज में एक अटल संकल्प देखा है। आज से पहले भी जब कभी उनसे अपना विचार बदलने की प्रार्थना की गई, उन्होंने उसे अस्वीकृत किया। आज कैसे वे मान जायंगे?

मंजरिका : नगर के गण्यमान्य और विज्ञ जन स्वयं महाराज से प्रार्थना करेंगे। उन्हें विश्वास है कि महाराज उनकी बात मान लेंगे।

भूपत : किन्तु महाराज से मिलने का यह कौनसा समय है? मैं आप से

प्रार्थना करता हूँ आप यह सब राजमाता से कह दीजिए। वही महाराज से निवेदन करेंगी।

मंजरिका : ठीक है। किन्तु राजमाता इस समय कहाँ होंगी ?

भूपत : ऊपर अन्तःपुर में। आप वहीं जाइए।

मंजरिका ऊपर जाती है। भूपत क्षण भर के लिये अकेला रह जाता है। वह वातायन के पास जाकर चारों ओर देखता है। एक वृद्धा प्रवेश करती है।

वृद्धा : (पुकारते हुए) चन्द्र ! चन्द्र !

भूपत मुड़कर वृद्धा को देखता है।

वृद्धा : यहां कौन है ?

भूपत : किसे ढूंढ रही हैं ? चन्द्र को ?

वृद्धा : मैं उसकी मां हूँ। कहां है वह ?

भूपत : माता वह कुमार को संदेश देने गया है। क्या काम है उससे आपका ? अरे, आप की सांस फूल गई है।

वद्धा : ओह ! ये सीढ़ियां चढ़ते सांस उखड़ गई। मार्ग के प्रत्येक पग पर लोग ही लोग थे। उनके बीच से ही अपने लिये मार्ग बनाकर यहां आई हूँ।

भूपत : तो यह आग सारे नगर में फैल गई है ?

वृद्धा : प्रत्येक मां अपने पुत्र को जाने से रोकने का यत्न कर रही है। अपने कोख-जाये को कौन अशुभ घड़ी में घर से निकलने देगी?

भूपत : इसे आप अशुभ घड़ी कैसे कहती हैं ?

वृद्धा : पुत्र, हाथी का अकारण पगला जाना अशुभ नहीं तो क्या है? एक पशु को इस प्रकार का दौरा यों ही नहीं पड़ता है। यों ही वह अपनी ऐसी दशा नहीं बनाता है ! जब तक उसे किसी अनिष्ट का आभास नहीं मिला होगा तब तक वह यों ही मत्त नहीं हुआ होगा। नहीं ! नहीं !! मैं चन्द्र को अशुभ घड़ी में प्रस्थान करने नहीं दूँगी।

भूपत : माता, बात का बतंगड़ इसे ही कहते हैं !

वृद्धा : क्या कह रहे हो, पुत्र ? जिस पुच्छल तारे को इस से पहले कभी नहीं देखा था, उसका उदय आज ही क्यों हुआ ? यदि आज मेरा चन्द्र मेरी बात नहीं रखेगा तो फिर कल पूर्व से नहीं पश्चिम से सूर्य का उदय होगा।

भूपत : माता, अकेला आप का चन्द्र ही महाराज के साथ नहीं जा रहा है। लाख भर जन इस अभियान के साथ जा रहे हैं।

वृद्धा : नहीं ! नहीं !! मैं उसे यह देश छोड़ने नहीं दूँगी।

भूपत : महाराज की आज्ञा पर अपने प्राण निछावर करना प्रत्येक राज कर्मचारी का कर्त्तव्य है।

वृद्धा : मैं अपने इकलौते बेटे की बलि नहीं दे सकती। इससे पूर्व मैंने क्या कम बलिदान किया है ? इससे पूर्व मेरा सुहाग, मेरा भीमसेन सा पति भी अभियान के साथ गया था। बहुत लोग लौटे परन्तु वह नहीं लौटा।

भूपत सीढ़ियाँ उतर कर वृद्धा के निकट आता है।

भूपत : उसने स्वर्ग प्राप्त किया।

वृद्धा : एक चन्द्र के अतिरिक्त मेरा और कौन है ?

भूपत : सभी वीर सैनिक आपके हैं। मैं आपका हूँ!

वृद्धा : इस समय मैं जाने कैसा भय अनुभव कर रही हूँ! इस शरीर का क्या भरोसा! चन्द्र जाने किस देश में होगा और मेरे प्राण "पुत्र! पुत्र!" पुकारते उड़ जायेंगे।

भूपत : माता, आप मन को शांत रखें। चन्द्र सकुशल लौटेगा और ईश्वर आपको लम्बी आयु भी देगा।

वृद्धा : अशुभ घड़ी और अपशकुनों के मध्य प्रस्थान करने वाला सकुशल कैसे लौट सकता है? मेरे मन में आशंका अकारण नहीं जागी है! अकारण ही जनता क्षुब्ध नहीं है।

सेनापति वर्द्धमान का प्रवेश। उसी समय मंजरिका भी ऊपर से आती है। वर्द्धमान के साथ रक्षपाल भी है।

वृद्धा : ये गण्य-मान्य पुरवासी ही तो नहीं पधारे?

मंजरिका : स्वामी, आप आगये?

वर्द्धमान : मंजरिका, तुम यहां कैसे? बात क्या है?

मंजरिका : स्वामी, मैंने भी यदि कैकेयी की भाँति आपके वर का वचन लिया होता तो मैं आज निःसंदेह आपको अपना वचन याद दिलाती!

वर्द्धमान : मैं समझा नहीं! तुम्हें किसी बात की चिन्ता है क्या?

मंजरिका : सेना लेकर कल प्रस्थान न किया जाय। मेरा मन अस्थिर है और अस्थिर मन अमंगल सूचक होता है।

वर्द्धमान : यह लोगों का भ्रम है। तुम्हें अपने मन को स्थिर रखना चाहिए।

मंजरिका : किन्तु जो व्यतिपात इस समय दृष्टिगोचर हो रहे हैं, वे राजा और प्रजा के लिये शुभ नहीं हो सकते!

वर्द्धमान : कैसे व्यतिपात ? क्या कहीं कोई ब्रह्म हत्या हुई है ? क्या कोई नगर वासी किसी उत्पात से पीड़ित हुआ है ? क्या किसी के धन-धान्य का अपहरण हुआ है ?

वर्द्धमान : माया ! कैसी माया ?

वृद्धा : हाथी का अकारण पगला जाना। उत्तर दिशा की ओर पुच्छल तारे का दीख पड़ना। ये दोनों बातें अपशकुन नहीं तो और क्या हैं ? अपने जीवन में आज से पहले मैं ने यह नहीं देखा है। सेनापति मेरे इकलौते पुत्र चन्द्र को आप सेवा मुक्त कर दें। मैं उसे स्वदेश से बाहर जाने नहीं दूँगी।

मंजरिका : स्वामी, आप महाराज से विनती कीजिए कि वे कल प्रातःकाल प्रस्थान करने का विचार बदल दें। किसी अन्य समय प्रस्थान से क्या अन्तर पड़ेगा ?

वर्द्धमान : मैं पूछता हूँ कि कल प्रातःकाल ही चल पड़ने में बुरा क्या है ? पड़ाव पड़ाव पर कोट राजे जो सैनिक, रथ घोड़े आदि लेकर हमारी प्रतीक्षा कर रहे होंगे, वे क्या सोचेंगे ? सोचेंगे कि राजकुल में विद्रोह हुआ है। शत्रुओं को सिर उठाने का अवसर मिलेगा। राजस्व मिलना बंद हो जायेगा।

वृद्धा : परमात्मा महाराज को लाखों वर्ष तक जीवित रखे। वह सब नहीं होगा।

वृद्धा वर्द्धमान की ओर आती है।
वह पीछे हटता है।

मैं आपके पाँव पड़ती हूँ। मेरे इकलौते पुत्र, मेरे चन्द्र को आप राज सेना से निकाल दें।

वध्दा वर्द्धमान के पांव पड़ती है। चन्द्र और उसके पीछे पीछे ब्राह्मणों और बौध्द भिक्षु सर्व-जन मित्र का प्रवेश।

भूपत : चन्द्र, तुम्हारी माता आई हैं।

चन्द्र पास जाकर वृद्धा को उठाता है।

चन्द्र : माँ, मेरा भाग्य सेना के भाग्य के साथ ही गुंथा हुआ है। सेनापति, नगर के ये आदरणीय ब्राह्मण और भिक्षु सर्वजन मित्र कुछ निवेदन करना चाहते हैं।

वृद्धा जैसे तैसे उठ खड़ी होती है।

वृद्धा : चन्द्र !

चन्द्र वृद्धा को ले जाकर शिला चौकी पर बिठाता है। बर्द्धमान सीढ़ियाँ चढ़ने लगता है।

वर्द्धमान : कहें, जो कहना चाहते हैं।

सर्वजनमित्रः सेनापति ! यदि महाराज पूर्व निश्चित योजना के अनुसार कल प्रातः प्रयाण करेंगे तो मेरे विचार में यह अशुभ और अनिष्टिकारक होगा।

वर्द्धमान : कारण !

सर्वजनमित्र : कारण यही है कि उत्तर दिशा में धूमकेतु का उदय हुआ और गजेन्द्र अकारण ही बौरा गया।

वद्र्धमान : भिक्षु, ये तो प्रकृति के अटल व्यापार हैं। यदि कल हमें प्रस्थान नहीं करना होता तो क्या ये व्यापार घटित नहीं होते ?

सर्वजनमित्र : इन दोनों घटनाओं का फल राजा और प्रजा, दोनों के लिये अशुभ होगा।

वर्द्धमान : इससे पूर्व क्या कभी ऐसा हुआ है ?

सर्वजनमित्र : इससे पूर्व ऐसी दो असाधारण घटनाएं, एक साथ, एक ही समय, एक ही दिन घटित नहीं हुई हैं।

वर्द्धमान : किन्तु कल प्रयाण न करने का अर्थ होगा आने वाली सारी शीत ऋतु यहीं व्यतीत करना। क्या महाराज इसके लिये सहमत होंगे ?

एक ब्राह्मण : सेनापति ! यदि आप, सामन्त मित्र शर्मा और श्रीमान चिकत हमारी प्रार्थना महाराज तक पहुंचायें तो वे अवश्य कोई न कोई उपाय खोज निकालेंगे।

वर्द्धमान : मित्र शर्मा यहाँ नहीं हैं, चिकत मार्तण्ड देवालय पर कलश चढ़ाने गये हैं। अकेला मैं क्या उपाय कर सकता हूं ?

सर्वजनमित्र : उपाय एक ही है। कल प्रयाण नहीं होना चाहिए।

वर्द्धमान : महाराज से यह बात कौन कह सकता है ?

ब्राह्मण : सेनापति, आप अनुमति दीजिए। हम स्वयं महाराज से निवेदन करेंगे।

वर्द्धमान : किन्तु राजसभा बुलाने का यह कौनसा समय है ?

सर्वजनमित्र : हमारी प्रार्थना महाराज तक अवश्य पहुंचनी चाहिए।

मंजरिका : स्वामी ! भिक्षु सर्वजन मित्र सम्भवत: राजभवन में प्रथम बार पधारे हैं। क्या ये बिना कुछ प्राप्त किये निराश लौट जायेंगे ?

वद्‌र्धमान : ये जो भी चाहें, प्रस्तुत कर देंगे। किन्तु सेना का प्रयाण रुक नहीं सकता।

सर्वजनमित्र : वर्द्धमान ! यदि मेरी विनती पर विचार नहीं होगा तो वह मेरा अपमान होगा।

वर्द्धमान : भिक्षु सर्वजन मित्र के लिये हमारे मन में मान और आदर का भाव ही है। किन्तु महाराज का आज्ञापालन हमारा प्रधान कर्तव्य है।

सर्वजनमित्र : वर्द्धमान ! मैं आप से अन्तिम बार विनती करता हूं कि आप हमारी प्रार्थना महाराज तक पहुंचायें। वे अवश्य हमारी

बातों पर विचार करेंगे। राजा का मंगल ही प्रजा का मंगल है। देश कल्याण के लिये भी यही उचित है कि सेना का प्रयाण न हो। विशेषकर उस समय जब अपशकुनों ने हमें जकड़ लिया हो ! सेनापति, युद्ध की आकांक्षा में तभी हमें सफलता मिल सकती है जब प्रकृति भी अनुकूल हो। समय भी सहायक हो। जब लोगों के हृदय प्रफुल्ल हों। प्रकृति के भी कुछ अपने नियम हैं जिनका पालन रवि-चन्द, दिवस-रात्रि, मेघ, आकाश और पृथ्वी करती है। ये मनुष्यों को भावी अमंगल की पूर्व सूचना देते हैं। उसे चेता देते हैं। यदि मनुष्य चेत जाये तो उसका कल्याण होगा। अन्यथा आपत-काल की आंधी प्रकट होकर सर्वनाश का कारण बनेगी।

वर्द्धमानः : यह आपका शाप है, भिक्षु ?

सर्वजनमित्र : सेनापति ! मैं राजा और प्रजा का शुभेच्छु हूँ। मैं अखिल विश्व का शुभ चाहता हूँ। लोक कल्याण के हेतु यदि मुझे स्वयं को अर्पित भी करना पड़े तो वह भी करूँगा। मैं भला किस मुख से शाप दूँ ? शाप देना मेरे धर्म के प्रतिकूल है। राजविहार के सारे भिक्षुओं की शुभकामना ही उन्हें इस समय महात्मबुद्ध की प्रतिमा के चरणों तले ध्यानमग्न बनाये हुए है।

मंजरिका : स्वामी, जब सारी प्रजा चाहती है तो आप फिर महाराज से प्रार्थना क्यों नहीं करते

वर्द्धमान : महाराज से बात मनवाने के लिये समीचीन कारण होना चाहिए।

मंजरिका : इस से अधिक समीचीन और कौनसा कारण हो सकता है? शुभ बेला में सेना का प्रस्थान ही शुभप्रद हो सकता है।

वृद्धा : मेरा चन्द्र प्रस्थान नहीं करेगा। कदापि नहीं।

भूपत : सेनापति ! यदि आप राजमाता से निवेदन करेंगे तो वे पुरवासियों का प्रतिनिधित्व करते हुए स्वयं महाराज से प्रार्थना करेंगी ।

मंजरिका : मैं अभी उन्हें यह संदेश देकर आई हूँ । सुनकर वे भी आशंकित हो गयीं कि कुछ अशुभ घटने वाला है । क्योंकि... क्योंकि.... ।

सभी उत्सुकता से उसकी ओर देखते हैं। क्षण भर के लिये चुप्पी ।

मंजरिका : क्योंकि इस समय सारे अन्तःपुर में भय छाया हुआ है ।

वर्द्धमान : भय छाया है ? कैसा भय ?

मंजरिका : क्योंकि राजकुमार के कनिष्ट पुत्र जयापीड को शीतला निकल आई है ।

वर्द्धमान : हा हन्त !!

भूपत
रक्षपाल } राजकुमार जयापीड को शीतला निकल आई है ?

कुछ क्षण चुप्पी ।

सर्वजनमित्र : सेनापति ! अब मुझे आपके मुख पर भी भय की रेखाएं स्पष्ट दीख रही हैं। इस तीसरे संकेत का अर्थ भी यही है कि राजभवन के भीतर और बाहिर प्रकृति हमें सावधान कर रही है कि कल सेना प्रस्थान न करे ।

वृद्धा : चन्द्र ! यदि तुम मेरी बात नहीं मानोगे तो मैं समझ लूंगी निकट समय आ गया है । कल पूर्व दिशा से नहीं, पश्चिम से सूर्योदय होगा ।

मंजरिका : स्वामी, मेरी आँखों के आगे जैसे अन्धेरा आ रहा है और पाँव लड़खड़ा रहे हैं। जाइये, इन माननीय जनों की आकांक्षा महाराज से कह दीजिए। वे निःसंदेह कल प्रयाण करने का विचार त्याग देंगे।

वृद्धा : यदि आप इन्कार करेंगे तो यह बुढ़िया आपके पांव पड़ती है। आप मेरे इकलौते पुत्र चन्द्र को अपनी सेना से निकाल दीजिए।

वर्द्धमान तनिक सोचता है।

मंजरिका : आप भिक्षु की इच्छा पूरी कीजिए। इस वृद्धा की भावना के लिये भाषा बन जाइए।

वृद्धा : यदि आप नहीं मानते तो मैं यहीं, इसी समय प्राण दे दूंगी।

चन्द्र : माँ ! तुझे यह क्या हो गया है ?

सर्वजनमित्र: वर्द्धमान, अपने हृदय को दृढ़ कीजिए। सम्भव है महाराज स्वयं इन बातों पर विचार कर रहे होंगे।

वर्द्धमान : ठीक है ! मैं प्रयत्न करूँगा। आपका निवेदन महाराज के आगे रखूंगा पर अपनी ओर से कुछ नहीं कहूँगा।

ऊपर जाने लगता है। रक्षपाल भूपत और चन्द्र नमन करते है।

रक्षपाल
भूपत
चन्द्र } महाराज ललितादित्य की जय हो ! महाराज ललितादित्य लक्षायु हों !!

पूर्व स्थिति में आ जाते हैं।

चन्द्र : माँ, तुम से किसने यहां आने के लिये कहा ? क्या मैं तुम्हारा आर्शीवाद पाकर घर से नहीं चला हूं ?

वृद्धा : हाँ ! पर तव प्रकृति ने कोई चेतावनी नहीं दी थी। छोटे राजकुमार पर शीतला माता की कृपा नहीं हुई थी।

भूपत : देवी माता राजकुमार की रक्षा करें। आप स्वस्थचित घर लौट जाइए। हमारे भाग्य में जो लिखा होगा, वही होकर रहेगा।

वृद्धा : मैं इस आवोध बालक को इस समय देश से बाहिर नहीं जाने दूंगी। कदापि नहीं।

चन्द्र : मां, महाराज को नगरवासियों की बातों पर विचार करने दो। परिणाम शुभ ही होगा।

भूपत : महाराज उन लोगों में नहीं हैं जो इतनी सुगमता से अपने विचार बदलते हैं। वास्तव में महाराज की देवी शक्ति में इन मान्य पुरजनों की आस्था टूट चुकी है।

सर्वजनमित्र : कदापि नहीं ! महाराज की प्रत्येक शक्ति पर हमारी आस्था यथापूर्व है। किन्तु देश कल्याण के लिये उचित यही है कि युद्ध न हो। किसी प्रकार का कोई अभियान न हो।

भूपत : महाराज ललितादित्य के अभियान अकारण नहीं होते हैं ! ये महान तीर्थ स्थान और विहार, अमूल्य देव प्रतिमाएं बड़े बड़े विद्वान और शिल्पकार तथा कश्मीर देश की कीर्ति इनहीं अभियानों का फल है।

सर्वजनमित्र : किन्तु तव कोई अपशकुन आगे नहीं आये थे। अतः परिणाम शुभ ही रहा।

वृद्धा : आज प्रकृति भय दिला रही है। भय लोगों के हृदयों में बहुत गहरा चला गया है। हाय ! कोई अतिह न हो जाय ! कोई अतिह न हो जाय !!

चन्द्र : माँ, तुम इतनी विचलित क्यों होती हो ? मैं इतना कायर नहीं कि राजसेना से भाग निकलूँ ! कदापि नहीं। जहाँ जहाँ महाराज और उनकी सेना जाएगी, मैं भी जाऊँगा।

वृध्दा : और मैं यहां 'पुत्र पुत्र' पुकार पुकार कर प्राण छोड़ूंगी ? इन मार्गों से चलकर पीर पंचाल को पार कर संदेस पाती भी नहीं भेज सकोगे। जो पीर पंचाल के पार गया उसके लौटने की आशा किस ने की ?

भूपत : माता, आप का चन्द्र अवश्य लौटेगा। मैं अपनी जान देकर प्रत्येक कष्ट और प्रत्येक शत्रु से इसकी रक्षा करूँगा। यह मेरा प्रण है। मैं आपके चरणों पर अपना मस्तक रखकर यह प्रण करता हूँ।

भूपत वृद्धा के चरणों पर अपना मस्तक रखता है। चन्द्र भूपत को उठाता है।

चन्द्र : भूपत ! आप ने मेरी रक्षा करने का प्रण किया।

वृद्धा दोनों के कंधों पर हाथ रख कर कहती है।

वृद्धा : महादेव प्रत्येक कष्ट और संकट में तुम दोनों की रक्षा करें। तुम्हारी रक्षा मां शारिका करे !

भूपत और चन्द्र आगे बढ़ने लगते हैं।

वृद्धा : चन्द्र ! तनिक ठहरो ! लो यह जंत्र अपनी दाहिनी बांह में बाँध लो।

वृद्धा चन्द्र की बाँह में जंत्र बाँधती है।

वृद्धा : यदि कल प्रातः ही निकलना होगा तो इसे गले में डालना।

एक ब्राह्मण : कल प्रातः कोई भी नहीं निकलेगा। महाराज अवश्य भिक्षु-राज की और हमारी प्रार्थना स्वीकार करेंगे।

भूपत : किन्तु मैं महाराज के दृढ़ और अटल निश्चय से परिचित हूँ।

मंजरिका मंच के अग्रभाग की ओर आती है।

मंजरिका : माता भवानी भिक्षु की मनोकामना पूर्ण करे। मेरी बाँछा पूरी करे।

सेनापति वर्द्धमान सीढ़ियां उतरने लगता है।

ब्राह्मण : देखिए! सेनापति शुभ समाचार लेकर आ रहे हैं।

वर्द्धमान के हाथ में गेरुए रंग की ध्वजा है। ध्वजा पर पंख फैलाए गुरुड़ की आकृति बनी है।

सर्वजनमित्र : महाराज ललितादित्य की जय! सेनापति! महाराज ने हमारी प्रार्थना स्वीकार की होगी?

वर्द्धमान दो सीढ़ियों पर खड़ा रहकर ध्वजा लहराता है।

वर्द्धमान : महाराज ने आपकी प्रार्थना अस्वीकार की। उनका निश्चय अटल है। कल प्रातःकाल वे सेना सहित पूर्व निश्चित योजना के अनुसार प्रयाण कर रहे हैं।

सभी स्तब्ध रह जाते हैं। मंजरिका धीरे धीरे आकर वद्र्धमान के पांव छूने लगती है। भूपत रक्षपाल और चन्द्र सिर झुकाते हैं।

भूपत
चन्द्र
रक्षपाल : महाराज ललितादित्य की जय !

वृद्धा धीरे धीरे मंच के अग्रभाग की ओर आकर धीमे स्वर में कहती है।

वृध्दा : इस विकट काल में अवश्य परिश्रम से सूर्य उगेगा।

भिक्षु और ब्रहमण प्रस्थान करते हैं। भिक्षु बाहर जाते जाते उचारते हैं।

भिक्षु : बुद्धं शरणं गच्छामि ! संघ शरणं गच्छामि !! धम्मं शरणं गच्छामि !!!

(धीरें धीरें पर्दा गिरता है।)

द्वितीय अंक

(मंच पर स्थापित 'सेट' से एक हिमाच्छादित पर्वत में खोदी गयी गुफा का आभास मिलता है। गुफा एक पहाड़ी कोठे के भीतरी भाग जैसी दीखती है। खम्भों के स्थान पर पुरानी काठ की चोटियां, भाले और लकड़ी के लट्ठे रखे गये हैं। एक ओर जैसे दिम को काटकर ही प्रवेश के लिये द्वार बनाया गया है। पृष्ठ भाग में छोटे झरोखे कुरेदे गये हैं।

प्रस्तुत अंक रात्रि के अन्धेरे में सम्पन्न होता है। मंच के ऊपरी भाग में बहुत से भाले दिम में गाड़ कर जैसे तैयार रखे गये हैं। इनके आगे सोने के लिये एक चबूतरा बनाया गया है। कुछ और लकड़ी की पट्टियां और पिटारे दिखाई दे रहे हैं। बायीं ओर भी सोने के लिये एक दो छोटे चबूतरे बने हैं। असि, खड्ग, भल्ल, ढाल आदि अस्त्र-शस्त्र यहां वहां बिखरे पड़े हैं। एक कोने में लूकाटी जल रही है। वह ऐसा प्रकाश दे रही है मानो उसमें चर्बी जल रही हो। चबूतरों पर वन्य-पशुओं की खाल बिछी है।

सेनापति वर्द्धमान मंच के ऊपरी भाग में स्थित चबूतरे पर सोया है। चन्द्र और भूपत एक काठ की पेटी के साथ टेक

लगाये और पशुओं की खाल ओढ़े बैठे हैं। इनके मुख से ही इनकी शोचनीय दशा का आभास मिलता है। दोनों की दाढ़ी बढ़ आई है। भूपत चन्द्र के पांव में जल भिगोयी पट्टियां लगा रहा है। पास ही पानी भरा एक चमड़े का पात्र है)।

चन्द्र : सूँ···सूँ···भूपत, तुम किस नथुने से सांस ले रहे हो ?

भूपत : क्यों ? (जोर से सांस लेकर) दोनों नथुनों से।

चन्द्र : मैं केवल बायें नथुने से सांस ले पा रहा हूँ। लगता है मेरी नाक बंद है। वैसे यहां साँस बंद होने और दम घुटने में देर ही क्या है ?

भूपत : ऐसा मत कहो। अपने पांव को थोड़ा आगे करो।

चन्द्र : उफ ! तनिक धीरे से। देखो तो इस अंगूठे का नाखुन गल गया है और चर्बी निकल आई है।

भूपत : चिन्ता की कोई बात नहीं है। तुम्हारे ये घाव शीघ्र ही ठीक हो जायेंगे।

चन्द्र : क्या कहते हो ? पीड़ा तो प्रतिपल बढ़ ही रही है।

भूपत : ज्योंही सूरज निकलेगा, तुम्हारे घाव भर जायेंगे।

चन्द्र : कहाँ भर जायेंगे ? जब से इस सूने हिम क्षेत्र में आये हैं तब से न मेघ हटते हैं, न सूरज निकलता है। यह हम कहाँ आ गये हैं ? यहां न कोई मनुष्य है, न कोई शत्रु और न ही कोई मित्र। पशु पक्षी भी नहीं दीखते हैं। जो भी पेड़ पौधे रहे होंगे, वे हिम के नीचे दब गये हैं। देव जाने यहां कभी मनुष्य के पाँव पड़े भी हैं या नहीं।

भूपत : जो बात गई सो बात गई। मुझे पूरा विश्वास है कि जब आकाश में सारस पक्षी प्रकट हो जायेंगे, घने मेघों का अन्धकार हट जायगा तो सूर्यदेव दर्शन देंगे। उनकी आभा और उष्णता से ही तुम्हारे दोनों पाँव ठीक हो जायेंगे। तब तक ये जल भिगोयी पट्टियाँ ही उपचार हैं।

पट्टी को निचोड़ कर पाँव पर रखता है ।

चन्द्र : तुम्हें अब भी विश्वास है कि सूर्यदेव दर्शन देंगे ?

भूपत : हाँ, पूरा विश्वास है । आज नहीं तो कल । कल नहीं तो परसों । कौन राहू या केतु उन्हें लील लेगा ?

चन्द्र : यह हिम राशि, यह मेघाच्छादित नभ, यह कालयान्त की सी शीत कब हमें मुक्त करेगी ।

भूपत : ईश्वर हमारी यह परीक्षा ले रहा है । हमारी ही नहीं, यह महाराज के दृढ़ संकल्प की भी परीक्षा है ।

चन्द्र : मानता हूँ कि महाराज सर्वाधिकार हैं । जैसा चाहते हैं वैसा करते हैं । परन्तु उन्होंने अपने शाप के साथ हमें भी आ घेरा ।

भूपत : महाराज को किसी का शाप नहीं है । वे सर्व-शक्तिमान हैं ।

चन्द्र : कैसी बातों पर आप विश्वास करते हैं ? यहाँ पहुँच कर जो हिमशिलाएं पहाड़ों से खिसक कर गिरीं उनसे शेष बचा ही क्या ? घोड़े रहे न हाथी । टट्टू रहे न खच्चर । रहे तो केवल हम इने गिने सेवक, दास, सेनापति, महाराज, राजगुरू और मैं और···

भूपत : और तुम हतोत्साह होते हो ! अभी हम सैकड़ों सैनिकों सहित जीवित हैं ।

चन्द्र : एक लाख सेना जब नहीं रही तब हम और कितने समय तक रह सकते हैं ।

दोनों पाँव तनिक ऊपर उठाकर फिर धरती पर पटकता है ।

कब तक मैं यह पीड़ा सहन करूँ ? उफ !

भूपत : अंधेरा अब शीघ्र ही हटेगा ।

चन्द्र : प्रतिदिन यही सुन रहे हैं आज इसकी मृत्यु हुई, आज उसने प्राण छोड़े ।

भूपत : यह तो ईश्वर का अटल नियम है । जिसके भाग्य में जो स्थान लिखा होगा, उसकी मृत्यु वहाँ होगी । जो जनमेगा, वह अवश्य मरेगा ।

चन्द्र : मृत्यु अनिवार्य है । परन्तु यह भी कैसी मृत्यु कि रोने वाला भी कोई न हो ।

पृष्ठभूमि में हाथी की चीत्कार उभरती है ।

चन्द्र : सुनिए ! सुनिए ! गजेन्द्र की चीत्कार सुनिए !!

भूपत : तुम व्यर्थ ही इतने विचलित होते हो ।

चन्द्र : ओह ! मेरे पाँव में बहुत अधिक पीड़ा हो रही है । इस हाथी की चीत्कार मेरे हृदय को बेध रही है ।

भूपत : यह गजेन्द्र की चीत्कार नहीं है ।

चन्द्र : गजेन्द्र की नहीं तो और किसकी है ? आज इस पशु का भी प्राणान्त हो जाएगा ।

भूपत : उस ओर ध्यान मत दो । ये सेनापति वर्द्धमान के खर्राटे हैं ।

चन्द्र : तनिक इधर देखिए । कोई छाया सी दीख रही है । लगता है यह इस ओर ही बढ़ रही है ।

भूपत : कोई छाया नहीं दीख रही है । यह रात का अन्धेरा घना हो रहा है ।

चन्द्र : अच्छा ! तो बांध लो पट्टी । बांध लो शीघ्र । हाय ! हम सभी की मृत्यु यहीं होगी, यहीं होगी ।

भूपत : लगता है तुम्हारा शैशव अभी नहीं गया है । महाराज की बात पर विश्वास रखो । कल प्रातः आकाश में सारस उड़ेंगे और

घने मेघों का अन्धकार नहीं रहेगा। हम अपना मार्ग पाकर चल पड़ेंगे।

चन्द्र : असत्य ! नितान्त असत्य ! !

भूपत : यह सत्य है। विश्वास रखो और शुभ की कामना करो।

चन्द्र : क्या कहते हैं ? अब भी शुभ होगा ? जब इस निर्जन हिम प्रदेश में हमारे प्राण निकलेंगे तभी शुभ होगा।

भूपत चन्द्र के पाँव में पट्टी बांधने का कार्य पूरा करता है।
वर्द्धमान खर्राटें भरता है।

चन्द्र : सुनिए ! कोई आ गया। भीतर आ गया। देखिए कौन है यह। ओह !

भूतत : कोई भी नहीं। क्यों इस प्रकार आशंकित होते हो ? सेनापति विश्राम कर रहे हैं।

चन्द्र : नहीं ! यह कोई छाया है। जो क्षण में फैलती है, क्षण में सिकुड़ती है।

भूपत : तुम व्यर्थ भयभीत होते हो। यदि कोई यहाँ आ गया तो उसका सामना मैं करूँगा।

चन्द्र : क्यों ? क्या आपको अपनी जान प्यारी नहीं हैं ? या छाया आपका कुछ भी बिगाड़ नहीं सकती ?

भूपत : चल कर देख ही लुं कि तुम कैसी छाया-माया से भीत हो।

भूपत उठ खड़ा होता है और तात खड़ग लेकर इधर-उधर घूमकर वापस आता है।

भूपत : देख लो। कहीं भी कोई नहीं है।

चन्द्र : तो फिर मुझे ही भ्रम हुआ होगा। किन्तु आप—तुम गजेन्द्र की चीख नहीं सुन रहे हो। लगता है उसके प्राण बड़ी कठिनाई से निकल रहे हैं।

भूपत : ऐसे अपशब्द न कहो। यदि उसे कुछ हो गया तो महाराज को बड़ा क्लेश होगा। यह हाथी उन्हें बहुत प्रिय है। और फिर गजेन्द्र है भी एक मूल्यवान हाथी।

चन्द्र : हाँ यह मूल्यवान हाथी है और जो मर गये वे इतने मूल्यहीन थे मानों पत्थरों से अनायास फूट पड़े हों। कैसी बातें करते हो ? चलो तुम्हारी बात ही मानते हैं। तब यह अन्तिम मूल्यवान पशु है। या यह बचा है या कुछ टट्टू।

भूपत : आओ। तुम्हारा सिर चाँप लूं। आओ मेरी गोद में सिर रख कर सो जाओ। तनिक इधर आओ। हाँ। ऐसे ही।

चन्द्र भूपत की गोद में सिर रखता है।

चन्द्र : ओह !

वर्द्धमान फिर खर्राटे लेता है।
चन्द्र सहसा उठ खड़ा होता है।

चन्द्र : देख लो, वही छाया ! फिर सामने आ गई।

भूपत : कोई छाया नहीं है। तुम सो जाओ। तुम्हारे पाँव की पीड़ा से ही तुम्हें नींद नहीं आती है।

चन्द्र : नहीं। मेरे पाँव में कोई पीड़ा नहीं है। यदि है भी तो मैं उसे भूल चूका हूँ। हाँ !

भूपत : तुम सोने का प्रयत्न करो। तुम्हें चैन मिलेगा। शांति मिलेगी।

चन्द्र : अशान्ति और वेचैनी मेरे हृदय में बस गई है। मुझे नीद कहाँ से आएगी ?

भूपत : चलो आँखें बन्द कर लो। भय और आशंका को भूल जाओ।

चन्द्र : ठीक है। यही करूंगा …ओह !

चन्द्र भूपत की गोद में सिर रख कर फिर लेट जाता है। चबूतरे पर सोया वर्द्धमान जैसे सहसा जाग पड़ता है। तरन से शिख तक कपड़ों में लिपटी एक बहुत ही सुन्दर वृद्धा वर्द्धमान के मुख के निकट अपना मुख ले जाकर जैसे उसे जगाती है। वर्द्धमान उठकर बैठता है। वृद्धा—मंजरिका उसके सामने है।

वर्द्धमान : कौन ? तुम कौन हो ? अरे! तुम मेरी मंजरिका तो नहीं हो ? नहीं। नहीं। तुम वह नहीं हो। वह नहीं हो। वह अद्वितीय सुन्दरी है, तरुणी है, मधु कलश सी मदिर यौवन से भरी है।

मंजरिका : स्वामी ! मैं...मैं वही हूँ। समय ने मुझे बुढ़ा दिया। मेरा यौवन आप की प्रतीक्षा करते करते बीत गया। मेरे इन हाथों पर दृष्टि डालिए। कितनी भद्दी झुर्रियाँ प्रकट हो गयी हैं। इन ही हाथों में रत्नदीप लेकर मैंने आपकी आरती उतारी थी। आपकी दीर्घायु की कामना की थी। मैं वही मंजरिका हूँ। आपके घर लौटने की प्रतीक्षा में रत।

वर्द्धमान : अरे ! इतना परिवर्तन। इतनी बदल गयी हो तुम ?

मंजरिका : आप अपनी दशा भी देखिए। अरे! यह क्या? आपके बायें गाल पर यह क्या है?

वर्द्धमान गाल पर हाथ फेरता है।

हां, यह क्या है? यह कैसा चिन्ह है?

वर्द्धमान : यह युद्ध में प्राप्त मेरी सफलता का चिन्ह है।

मंजरिका : हाय! क्या अभी भी आप की युद्धतृष्णा शांत नहीं हुई है? क्या आपको अपना घर याद नहीं आता है? अपने बाल बच्चे याद नहीं आते हैं?

वर्द्धमान : ओह! मैंने इस विषय में कोई विचार नहीं किया है। कुछ भी नहीं सोचा है।

दोनों जैसे स्तब्ध रह जाते हैं।
चन्द्र की निद्रा जैसे सहसा टूटती है।

चन्द्र : भूपत! यह क्या है? क्या आकाश में सारस उड़ने लगे?

भूपत : चन्द्र, तुम्हारी नींद अचानक टूट गयी।
देखो तुमने पाँव पर पाँव रखा है। इसीलिए तुम चौंक पड़े।

चन्द्र : मैंने अबकी बार दो छायाएं देखीं। सम्भवतः तुम्हारी और अपनी।

भूपत : कैसी छायाएं? मैं भी तो यही हूँ। मुझे कुछ भी नहीं दीखता। यह केवल तुम्हारा भ्रम है। सोने की चेष्टा करो।

चन्द्र : सोने की चेष्टा। हाँ, वैसा ही करूँगा। तुम भी सो जाओ। यहाँ कौन आयेगा।

भूपत और चन्द्र, दोनों लेट जाते हैं।
वर्द्धमान की चेतना जैसे लौटती है।

वर्द्धमान : मैंने अपना जीवन महाराज की लालसा को साकार करने के लिये, उनके हेतु युद्ध जीतने के लिये, नये नये देश और दिशाएँ देखने के लिये अर्पित किया है।

मंजरिका : किन्तु क्या यह कार्य अभी पूरा नहीं हुआ ? क्या अभी तक आप को इसमें सफलता नहीं मिली ?

वर्द्धमान : क्या कहूँ हम कैसी विपत्ति में आ धंसे हैं। कैसे चक्कर में घिर गये हैं ?

मंजरिका : कैसी विपत्ति ? कैसा चक्कर ?

वर्द्धमान : यह ऐसा चक्कर, ऐसा जलावर्त है जिसमें राजसी लालसा रूपी नाव की पतवार सम्भालती मेरी कर्मगति आ फंसी है। यह इस अपार हिम प्रदेश में हमारी विवश और असफल भटकने की नियति है जिसकी छोर छूने हम निकल पड़े थे।

मंजरिका : आप यहाँ आये ही क्यों ? क्यों वापस नहीं फिरे ?

वर्द्धमान : राजसी लालसा अभी पीछे हटना नहीं चाहती।

मंजरिका : आप घर कब लौटेंगे ?

वर्द्धमान : जब महाराज की लालसा को परिमिति प्राप्त होगी।

मंजरिका : परिमिति कब प्राप्त होगी ?

वर्द्धमान : जब महाराज इस पृथ्वी की कोई सीमा पालेंगे।

मंजरिका : हाय ! मनुष्य जीते जी क्या क्या पा लेना चाहता है ! नहीं सोचता है कि कितनी आयु बीत गई, कितनी शेष है।

वर्द्धमान : हम वहाँ हैं जहाँ हमें चारों ओर से हिम राशि ने घेर लिया है। हम तभी निकलने का मार्ग पा सकेंगे जब पुनः सूर्य प्रकट होगा। जब पुनः सारस पक्षी आकाश में उड़ेंगे। तभी हम आगे बढ़ सकते हैं या पीछे हट सकते हैं।

मंजरिका : मैं प्रतीक्षा करूँगी।...प्रतीक्षा करूँगी।

दोनों बाहें फैलाते हैं और फिर एक दूसरे के हाथ थामते हैं। वर्द्धमान धीरे धीरे फिर लेटता है।

मंजरिका : प्रतिदिन सायंकाल को देहरी पर दीपक जलाया करूँगी। आपकी बाट जोहती रहूँगी। जब तक सांस रहेगी, आपकी प्रतीक्षा करती रहूंगी। प्रतीक्षा ! बस प्रतीक्षा।

यह कहकर मंजरिका पीछे हटने लगती है और फिर अन्धकार में विलीन हो जाती है। वर्द्धमान जैसे गहरी नींद से सहसा जाग पड़ता है।

वर्द्धमान : मंज...रि...का ! ! ...ओह !

भूपत : (सहसा उठ खड़ा होता है) क्या बात है सेनापति महोदय !

भूपत की यह पुकार सुनकर चन्द्र भी जैसी गहरी निद्रा से जाग पड़ता है। वह भयातुर है।

चन्द्र : भूपत ! विशाल पंख फैलाए विकराल गिद्द आ गये ! हमें अपनी छाती से लगाना चाहते हैं।

भूपत : चन्द्र ! तनिक चुप भी रहो।

वर्द्धमान : मंजरिका! —क्या कहूँ, भूपत! मैंने एक स्वप्न देखा! भयानक स्वप्न। नहीं, एक मधुर स्वप्न।

भूपत वर्द्धमान के निकट जाता है।

चन्द्र : मैंने भी सपना देखा। आकाश से अचानक विशाल पंख फैलाए विकराल गिद्द उतरे। वे गिद्द हम सभी को गले लगाने के लिये आतुर थे।

भूपत : सचमुच आपने मधुर स्वप्न देखा ? यह स्वप्न अवश्य शुभ फल देगा ।

चन्द्र : क्या कहा ? शुभ फल !

वर्द्धमान : मैंने अपनी मार्या देखी । मंजरिका । वह अभी तक मेरी प्रतीक्षा कर रही है ।

चन्द्र : अभी तक मेरी प्रतीक्षा कर रही है ।

भूपत : श्रीमान । यह स्वप्न शुभ फलदायक है । कल सूर्य प्रकट होगा ।

चन्द्र : प्रकट होगा ? विकराल गिद्द के विशाल पंखों के नीचे से !

वर्द्धमान : मैंने उससे यही कहा । सूर्य प्रकट होगा और हम मार्ग पाकर यहाँ से निकल पड़ेंगे ।

पृष्ठ भूमि में हाथी की चीत्कार उभरती है । चन्द्र उठ खड़ा होता है ।

वर्द्धमान : भूपत, यह कैसी चीत्कार है ?

चन्द्र : गजेन्द्र हाथी की सांसें उखड़ रही हैं । वह प्राण त्याग रहा है ।

यह कहते कहते चन्द्र भूपत के समीप आता है ।

भूपत : तुम्हारे ये अमंगलसूचक शब्द तुम्हारी निर्बलता के परिचायक हैं ।

चन्द्र : हाँ ! मैं निर्बल हूँ । मेरा हृदय निर्बल है । मेरी बूढ़ी मां विष्णुधाम चली गयी होगी । मरते समय उसने मुझे शाप दिया होगा कि इस निर्जन हिम प्रदेश में विकराल गिद्ध मेरी बोटी बोटी नोंच लेंगे ।

वर्द्धमान : विकराल गिद्ध ! तुम बकते क्या हो ?

चन्द्र : मैंने सपना देखा । एक विकराल गिद्ध अपने विशाल पंख फैलाये उड़कर आगया । अपने कटीले परों में दबोचकर वह

हमें आकाश में बहुत ऊंचे ले गया। फिर उसने पंख खोले और हम एक एक करके अस्थि पंजर जैसे नीचे गिरने लगे।

वर्द्धमान : कितना भयानक स्वप्न ! कहीं तुम्हारा यह स्वप्न ही साकार न हो जाय ? नये सूर्य की प्रतीक्षा करते करते ही कहीं हमारे प्राण न निकल जायें ?

भूपत : श्रीमान्, आप कैसी वाणी बोलते हैं। ईश्वर का स्मरण करने के स्थान पर आप दोनों अशुभ और अनिष्टकारक बातें सोचते हैं।

वर्द्धमान : कौन जानता था कि यह मार्ग इतना दुर्गम होगा। महाराज ने किसी की भी नहीं सुनी। इस निर्जन स्थान में आकर हमने पाया ही क्या ?

चन्द्र : यहाँ न खाने पीने की व्यवस्था है और न विश्राम की। मेरी चढ़ती जवानी बुढ़ापे में बदल गयी। यहाँ केवल शिशर है... और...और है वही छाया। वही यमराज का भय।

भूपत : : (बड़प्पन से) यदि मरना ही हो तो भी शुभ वासना और शुभ कामना लेकर ही मरना चाहिए।

चन्द्र : कितना अच्छा होता यदि मैं भी युद्ध में मरा होता। अपनी इन आखों से मैंने कितनों को ही मरते देखा। परन्तु स्वयं न जाने किस क्षण की प्रतीक्षा कर रहा हूँ। नहीं जानता !

भूपत : आज तक हुआ सो हुआ। किन्तु मेरा मन कह रहा है कि महाराज की दिव्य शक्ति अवश्य अपनी माया दिखायगी। कल रवि प्रकट होगा। सारस उड़ेंगे।

चन्द्र : (सक्रोध) तुम्हारी जिह्वा पर बस यही एक बात है। मैं सुनते सुनते थक गया। पर तुम कहते कहते नहीं थकते हो।

वर्द्धमान अब अत्यधिक उदास और गम्भीर दीखता है। उसके

मुख पर भय की छाया है। आँखें जैसे दहक रही हैं।

वर्द्धमान : भूपत, तुम्हारा विश्वास किस बात पर टिका हुआ है ? यह केवल मृग तृष्णा है। सारस पक्षी कहाँ से उड़कर आयेंगे ? मेघों का अंधकार कब हटेगा ? हाय ! कितने हिम शिखरों को पार करके हम यहाँ आगये और यहाँ पहुँचते ही इस हिम प्रदेश के भयंकर अन्धड़ ने हमें आ घेरा। हमारे पास न आगे बढ़ने का विकल्प रहा न पीछे हटने का। चारों ओर हिम ही हिम है जो जमकर पत्थर बन गया है। ये हिम शिलाएँ कब पिघलेंगी ? मेघ बहुत नीचे, पर्वतों की तराई तक उतर आये हैं और हमें इस बात का भी ज्ञान नहीं कि हम कहाँ हैं ? इन मार्गों से कौन परिचित है ? कौन हमारा मार्ग दर्शक होगा ? जिस किसी को भी, जिस दिशा से मार्ग खोजने के लिये भेजा उसे पर्वतों से खिसकते हिम तक अपने साथ बहाकर ले गये। जो जीवित बचा है, उसके हृदय में भी मृत्यु का भय समाया है। अनेकों के पांव छालों से सड़ गये हैं। अनेक पंगु बन गये हैं और अनेकों को इस कड़ाके की शीत ने जीवित ही जला दिया। भूपत, हमारी खाद्य सामग्री का भंडार लगभग समाप्त हो चुका है। जलाने के लिये हमारे पास कुछ भी नहीं रहा है। पशु मर गये हैं। जो शेष बचे हैं वे भी आज या कल मर जायेंगें। जब ये थोड़े बहुत कपड़े और पशु चर्म भी नहीं रहेंगे, तब क्या होगा ? हम मृत पशुओं का माँस खा रहे हैं। मृतकों के कपड़े पहने हुए हैं। ओह ! कहें तो क्या कहें ? किससे कहें ? महाराज से ? उनके पास एक ही वाक्य और एक ही मंत्र है। "जब सारस पक्षी उड़कर आयेंगे, जान लो सूर्य निकल आयेगा। वही संजीवन होगा।" कैसे सारस पक्षी, कैसा सूर्य और कैसा संजीव ? यह भी कोई

जीवन है ? भूपत, महाराज भ्रम देकर हमें यहाँ ले आया है। हमने उसकी दैवी शक्ति पर विश्वास किया। यह कैसी दैवी शक्ति है जो इस समय भी कोई चमत्कार नहीं दिखाती है ? जो इस ममय भी हमें नहीं बचाती है ?

चन्द्र : श्रीमान्, आज महाराज का भाला आकाश की छाती बेध कर सघन मेघ पटल को फाड़ क्यों नहीं डालता ? आज उसके चरण अपने परस से हिम शिलाओं को पिघलाने में असमर्थ क्यों है ? आज वह अपनी कोई लीला क्यों नहीं दिखाता है ?

भूपत अलग जाकर खड़ा रहता है।

भूपत : सभी कुछ समय के आधीन है। हमारी प्रकृति बदलने लगी है। हमारे मन बदल गये हैं ? हमारी आस्था डगमगाने लगी है। हमारी रक्षा कैसे हो सकती है ?

वर्द्धमान : सुनो, कल प्रातःकाल तक यदि हमें निकलने का मार्ग नहीं मिलेगा तो हम सभी को मरना होगा !

भूपत : सभी को ?

हाथी की चीत्कार फिर उभरती है।

वर्द्धमान : हाँ, सभी को।

चन्द्र : और उससे पहले मरेगा गजेन्द्र हाथी। अभागे की साँस उखड़ते उखड़ते भी पूरी तरह उखड़ती नहीं है। कैसी यमयातना भुगत रहा है।

वर्द्धमान : इस दशा के उत्तरदायी हम स्वयं हैं। हमने अपना भाग्य महाराज को सौंपा। उसकी लालसा को अर्पित किया।

भूपत : ईश्वर हमारी सुनना और इस विपदा से उबार देना !

वर्द्धमान : ईश्वर हमारी कैसे सुनेगा ? हमने ईश्वर की पदवी महाराज को दी। उसके पीछे अपना जीवन गंवाया। उसकी आज्ञा को ईश्वरीय आदेश माना। प्रत्येक प्रकार का बलिदान देकर प्रत्येक संकट से उसकी और उसके धर्मगुरु की रक्षा करते आ रहे हैं।

भूपत : श्रीमान्, हमने आज तक महाराज की भक्ति की। उन्हें अवतार माना। उनकी प्रत्येक शक्ति पर परतीत रखी। अपने बंधु-बांधव छोड़कर उनके लिये अपने प्राण तक प्रस्तुत किए। परन्तु आज हमारी प्रकृति क्यों बदल गयी ? हमारी बुद्धि भ्रष्ट क्यों हो गयी ? हमारे विचारों में परिवर्तन क्यों आ गया ?

चन्द्र : नहीं आजाता परिवर्तन ? जब यमराज द्वार पर खड़ा होगा, तब मनुष्य किस बात पर परतीत रखेगा ? जीवित रहने पर अथवा अपने प्राण उसे सौंपने पर?

वर्द्धमान : (धीरे धीरे) अपने प्राण उसे सौंपने पर ही।

भूपत : नहीं, हम नहीं मरेंगे। कदापि नहीं। हम अवश्य मार्ग पा लेंगे। अवश्य अपने देश लौटेंगे। अवश्य मातृभूमि कश्मीर वापस पहुँचेंगे।

वर्द्धमान : भूपत, जाकर दर्पण में अपना मुख देखो। मृत्यु भय से तुम्हारी दोनों आँखें केसरवर्ण हो गयी हैं। जीवित तभी रहोगे जब खाने को कुछ मिलेगा। यहाँ खाने के लिये बचा ही क्या है ? बोलो ! चुप क्यों हो ?

पृष्ठभूमि में हाथी की चीत्कार कुछ तीव्र हो जाती है। रक्षपाल का प्रवेश। उसके हाथ में जलती हुई उलका है।

चन्द्र : कोई आ गया ।

वर्द्धमान : कौन ? ओ, तुम, रक्षपाल ! इस समय तुम यहां कैसे ?

रक्षपाल : श्रीमान ! गजेन्द्र निरकुश हुआ जा रहा है। वह शृंखला तोड़ कर अपनी बुरी गत बना रहा है।

वर्द्धमान : उसे भरपेट आहार नहीं मिलता होगा। शीत से वह ठिठुर रहा होगा।

रक्षपाल : श्रीमान, यह समाचार महाराज को मिलना चाहिए।

वर्द्धमान : क्या वह यह नहीं जानता है ? क्या वह नहीं जानता कि खाद्य भण्डार समाप्त होने को है ?

रक्षपाल : श्रीमान, हाथी की दशा देखकर जाने क्यों सैनिकों की आखें रक्तवर्ण हो गयी हैं। उनकी हिंस्र दृष्टि से लगता है कि वे एक दूसरे की ओर घात लगाये बैठे हैं।

वर्द्धमान : घात लगाए बैठे हैं ! भला क्यों ?

रक्षपाल : श्रीमान, यदि हाथी को कुछ हो गया तो वे एक दूसरे का वध करेंगे।

भूपत : शिव शिव ! वह तो ग्रह-युद्ध होगा। क्या अब हम एक दूसरे हाथों कट मरेंगे ?

वर्द्धमान : भूपत ! तुम्हें कोई मारने नहीं आयेगा। किन्तु याद रखो यदि कल सैनिकों को पेट बराबर भोजन नहीं मिलेगा तो वे एक दूसरे को मारकर नर भक्षी बन जायेंगे। कौन होगा जो भूखों मरना चाहेगा ! शीत से जो मरा सो मरा पर जो बचा वह कैसे भूखा रहकर प्राण त्याग सकता है ? वह अवश्य अपने से निर्बल को मारकर खा जायेगा। चाहे वह उसका भाई ही क्यों न हो !

चन्द्र : हाय ! सबसे पहले तो मैं ही मारा जाऊंगा। न मैं दौड़ सकूँगा न भाग सकंगा, न छिप सकता हूं और न ही लड़ सकता हूं। हाय, सबसे पहले तो वे मेरी ही हत्या करेंगे। मेरी बोटी-बोटी वे नोचकर खा जायेंगे। हां वे···या फिर·· विकराल गिद्ध ! !

भूपत : बस ! बस ! मैं यह सह नहीं सकता। श्रीमान, अब महाराज से कहें कि वे कोई उपाय करें। उनकी ओर देखने भर से ही सारे सैनिक पुनः नियन्त्रण में आ जायेंगे। उनके खड्ग हाथों से छूट जायेंगे। महाराज का प्रभाव प्रकट ही है।

चन्द्र : पर खायेंगे क्या ? पियेंगे क्या ? कैसे अपनी देह को ऊष्ण रखेंगे ? ओढ़ेंगे क्या ? जब इस निर्जन हिम प्रदेश में मेघ छाया सघन हो गई हो, जब अन्धकार ने जड़ चेतन को जकड़ लिया हो, जब महाराज की शक्ति में अवरोध आ गया हो, बुद्धि और विचारों में अवरोध आ गया हो, तब महाराज का प्रभाव कैसे प्रकट होगा, भूपत ?

वर्द्धमान : कब तक हम महाराज की वासनापूर्ति की प्रतीक्षा करेंगे ? कब तक ?

भूपत : जब तक भी हो, हमें प्रतीक्षा करनी ही होगी। कर भी क्या सकते हैं ? मेरी मूढ़ मति यही कह रही है कि हमें महाराज पर विश्वास रखना चाहिए। पूर्ण विश्वास।

वर्द्धमान : यह मत भूलो कि महाराज की सारी आयु सूर्य की उपासना करते बीत गई है। पर आज स्थिति यह है कि हम सूर्य की एक किरण के लिए भी तरस रहे हैं। कितना अच्छा होता यदि उसने मेरी बात सुनी होती। तब हमारी यह दुर्दशा नहीं होती।

भूपत : श्रीमान, आपकी कौनसी बात महाराज ने नहीं सुनी ?

वर्द्धमान : जब हम इस निर्जन हिम प्रदेश में पहुंचे, मैंने महाराज से प्रार्थना की कि लौट चलें। मार्गदर्शकों ने भी आगे जाने से इनकार किया था। उनमें से कोई भी इससे पहले यहां नहीं आया था। हमारे अभियान के साथ चलने वाले श्रांत भी आगे जाने के लिए तैयार नहीं थे। तुम तो जानते ही हो कहीं कोई मनुष्य दिखाई नहीं देता था। इसलिये मैंने उसके लौट चलने के लिए प्रार्थना की। हमारे साथ जो खाद्य सामग्री का भंडार था, पीछे लौटने पर कम से कम वह अन्तिम पड़ाव तक हमारे लिए पर्याप्त होता। किन्तु उसने नहीं माना। मैंने उनसे निवेदन किया कि सैनिक निस्तब्ध हैं, श्रांत हैं. वर्षों घर से बाहिर रहने के कारण घर लौटने के लिए व्याकुल हैं। परन्तु न उसने माना और न ही उसके अनुयायी राजगुरू ने।

भूपत : उन्होंने क्यों नहीं माना ? वे क्या चाहते थे ?

वर्द्धमान : जैसे तुमसे कुछ छिपा है। वे इस निर्जन हिम प्रदेश को पार करके पृथ्वी की सीमा पा लेना चाहते थे।

चन्द्र : कितना अच्छा होता यदि उन्होंने आपकी बात सुनी होती। फिर हम इस प्रलय में नहीं आ फंसे होते।

रक्षपाल : श्रीमान, मेरे लिए क्या आदेश है?

वर्द्धमान : कैसा आदेश ? यदि हाथी ने मरना ही होगा तो तुम क्या कर सकते हो ?

रक्षपाल : श्रीमान, सैनिक आशंकित हैं कि यदि हाथी अनियन्त्रित हुआ तो वह उनकी हिम गुफाओं और खाइयों को रौंदकर उनकी मृत्यु का कारण बनेगा। अत: वे सभी जागृत और सावधान हैं।

वर्द्धमान : इस महा संकट की यह अन्तिम घड़ी है।

रक्षपाल : श्रीमान, सैनिकों में यह समाचार भी फैल गया है कि खाद्य-भंडार समाप्त हो गया है।

भूपत : नहीं, कुछ न कुछ तो करना होगा। श्रीमान, आप महाराज के पास जाकर उनसे सारी बात कह दीजिए।

उल्का लेकर एक सैनिक का प्रवेश।

वर्द्धमान : ठहरो ! देखो कोई एक और शुभ समाचार लेकर आ रहा है।

सैनिक : सेनापति, राजगुरू यहीं पधार रहे हैं।

राजगुरू तेजी से प्रवेश करता है।

वर्द्धमान : ओ ! राजगुरू ! मेरे पास ? इस समय ?

राजगुरू : वर्द्धमान, महाराज ने सूर्य भगवान की स्वर्ण प्रतिमा खंड-खंड कर दी।

मृत्यु की सी निस्तब्धता।

वे सभी धर्म ग्रंथों के पन्ने फाड़कर आग में झोंक रहे हैं।

निस्तब्धता। तत्पश्चात राजगुरू के अवरुद्ध कंठ से निकलने वाले शब्द।

वर्द्धमान, महाराज इस समय अपनी आमूल्य रजनीकांत मणि को तोड़ रहे हैं।

वर्द्धमान : कारण ?

राजगुरू : कारण है ! बहुत ही स्पष्ट कारण है। इस निर्जन स्थान में आकर मैं कौन सा उपाय करूं कि सूर्य प्रकट हो, मेघ छाया हटे और हिम वृद्धि स्थगित हो।

वर्द्धमान : तुम्हारे किस उपाय से यह सम्भव होगा ? कहो, महाराज की दैवी शक्ति कब प्रकट होगी ?

राजगुरू : उपहास क्यों कर रहे हैं, श्रीमान ? महाराज के पास कौन सी दैवी शक्ति है जो प्रकट होगी ?

वर्द्धमान : क्या कहा ? तुम ही तो महाराज की दैवी शक्ति के उपासक हो ।

राजगुरू : सेनापति ! क्या कहूं ! किन्तु सच बोलने से ही मुक्ति होगी । उन दिव्य शक्तियों का प्रचार मैंने किया है। वह मैं ही हूं जिसने महाराज की वासनापूर्ति के हेतु यह मिथ्यावाद गढ़ा । मैंने ही यह बात फैलायी कि महाराज दिव्य शक्तियों का स्रोत हैं ।

वर्द्धमान
चन्द्र } : क्या···आ··· ?

चन्द्र : तुम तो धर्मगुरू थे । क्या तुम्हारे लिए ऐसा करना उचित था ?

भूपत : बोलो, जब मरुभूमि को अपने भाले से बेंधकर महाराज ने जल धारा प्रकट की तो क्या वह उनकी दैवी शक्ति नहीं थी ?

राजगुरू : (लम्बी सांस लेकर) नहीं । सच बोलने से ही मेरी मुक्ति होगी। वहां तो एक प्राकृतिक जलाशय था और महाराज तथा मैं वहां सबसे पहले पहुंचे । सेना का मनोबल बढ़ाने के लिए ही मैंने घोषित किया कि महाराज का भाला लगने से ही मरुभूमि से जलधारा फूट पड़ी ।

चन्द्र राजगुरू पर झपटता है ।

चन्द्र : ओह ! राजगुरू !! पतित धर्मगुरू!!!

भूपत चन्द्र को रोकता है ।

भूपत : चन्द्र तू पीछे हट जा ।·········राजगुरू, बोलो कलिंग देश में महाराज के पास सेब लेकर कौन आया था ?

राजगुरू : वह सेब मैंने अपने पास ही सुरक्षित रखा था । शत्रु पक्ष का जो घायल वृद्ध सैनिक उसे लेकर महाराज की सेवा में उपस्थित हुआ, उसकी परिचर्या सुश्रुषा हमने अपने शिविर में की थी ।

चन्द्र : और हमारे प्रयास के समय जब गजेन्द्र पगला गया तो क्या महाराज की एक दृष्टि ने उसे वश में नहीं किया ?

वर्द्धमान : तुम लोग मानते क्यों नहीं । उसे मैंने वश में किया । मैंने चारों ओर आग जलवाकर उसके भागने के मार्ग बन्द कर दिए।

चंद्र भूपत की ओर देखकर कहता है ।

चन्द्र : क्या महाराज ने राजमन्दिर के गवाक्ष से उस मस्त हाथी पर दृष्टि नहीं डाली ?

वर्द्धमान : वह तब गवाक्ष से देखने लगा जब हमने हाथी को वश में कर लिया था ।

भूपत : तब हमारे इस आपातकाल के लिए यही राजगुरू उत्तरदायी है ।

राजगुरू : हाँ ! हाँ! मै ही उत्तरदायी हूं । किन्तु इस समय जीवित रहने के लिए कोई उपाय करना होगा । मुझे लगता है कि सर्वनाश निकट है ।

वर्द्धमान : अभी सर्वनाश क्या शेष है ? तुम जानते हो कि तुम अब महाराज की किसी नई दिव्य शक्ति का प्रचार नहीं कर सकते हो और सम्भवतः इसलिए उपाय खोजने के लिए मेरे पास आये हो। इस यमपुरी में हमें तुम ले आये और यहां से छूटने का उपाय मैं खोजूँ ? बोलो, महाराज स्वर्ण प्रतिमा क्यों तोड़ रहा है ? धर्म ग्रंथों के पन्ने क्यों जला रहा है ?

राजगुरू : सम्भवतः उसकी आस्था भी टूट गयी । सारी आयु भगवान सूर्य की उपासना करके उसने जो चाहा प्राप्त किया । उसने कभी

भी निराशा का मुंह नही देखा । किन्तु इस समय उसे दीख रहा है कि हम सभी मर जायेंगे। इसलिए वह टूटे हृदय से प्रतिमाओं को तोड़ रहा है ।

चंद्र : अच्छा तो सारस पक्षी कब उड़कर आयेंगे ? यह बात कब सत्य होगी ?

राजगुरू : समझ में नहीं आता कि क्या कहूं ? पर सच बोलने से ही मुक्ति होगी । इस बात के लिए भी मैं ही उत्तरदायी हूं । मैंने ही महाराज को परामर्श दिया कि तुमलोगों का मनोबल अक्षय रखने के लिए वह तुम्हें यह आशा दिला दे। नहीं तो इस निर्जन हिम प्रदेश में किस आशा पर तुमलोग जीवित रहते ?

वर्द्धमान : पापी ! धर्म भ्रष्ट ब्राह्मण ! एक अँध-वृशभ बनकर लाखों लोगों को कुमार्ग पर ले जाकर तुझे क्या मिला ?

खड्ग निकालकर राजगुरू पर झपटता है ।

बोलो, तुझे क्या दण्ड मिलना चाहिए ?

राजगुरू : (त्रस्त होकर) श्रीमान, इस खड्ग को तनिक दूर रखिए । यदि आपके हाथ तनिक चूक गए तो ब्रह्म हत्या के पाप का भागी बनना पड़ेगा । मैं आपको शाप दे सकता हूं ।

वर्द्धमान : शाप ! इससे भी बढ़कर कोई शाप हो सकता है ? तू ही हमें स्वजनों और परिजनों से दूर इस जनहीन यमपुरी में मरने के लिए ले आया है ।

राजगुरू : कौन जानता था कि हम यहां आ जायेंगे ? महाराज पृथ्वी की सीमा पा लेना चाहता था। उसकी इस लालसा की रक्षा के लिए ही तुमलोगों के साथ मैं भी चल पड़ा ।

वर्द्धमान : तुम्हारा ज्योतिष, तुम्हारी गणना, तुम्हारी भविष्यवाणियां कब प्रकट हो जायेंगी? या वह केवल भ्रम था? मिथ्यावाद था?

राजगुरू : श्रीमान, ईश्वर जो करेगा, भला ही करेगा। पर महाराज को आज मेरी बातों पर भी विश्वास नहीं होता।

वर्द्धमान : विश्वास मुझे भी नहीं होता। इन्हें कैसे हो सकता है, महाराज को कैसे हो सकता है? तुम ब्राह्मण नहीं, एक हत्यारे हो। लो, मेरा यह खड्ग लो और अपनी आंखें निकाल लो। नहीं तो पता नहीं तुम्हें क्या देखना होगा?

राजगुरू : श्रीमान, इस प्रकार मेरी ओर मत देखिए। मैं महाराज के पास चला जाऊंगा। आप मेरी हत्या न कीजिए।

राजगुरू निकलने लगता है। वर्द्धमान उसके पीछे निकलता हैं।

वर्द्धमान : मैं तुम्हें जीवित नहीं छोड़ूंगा। तुम मेरे हाथों मरोगे। अभी। इसी क्षण। ऐसे।

राजगुरू : ओह··हाय महा··

भूपत : हाय! अनर्थ! अनर्थ!!

शेष : श्रीमान, यह क्या?

चंद्र : ब्रह्म हत्या! ब्रह्म हत्या! हे प्रभु!!

भूपत : इन नेत्रों ने क्या यही देखना था? ब्रह्म हत्या!

वर्द्धमान रक्त रंजित खड्ग ले कर पुनः प्रवेश करता है।

वर्द्धमान : हां, यह ब्रह्म हत्या है। मुझे ब्रह्म हत्या का पाप चढ़ा। जाओ, महाराज से पूछो कि सारस कब उड़कर आयेंगे? सूर्य कब निकलेगा? हिम कब पिघल जायेगा? आकाश से मेघों का अन्धकार कब हटेगा? हमें निकलने का मार्ग कब मिलेगा?··· और हम सैनिकों को खाने के लिए क्या देंगे?

भूपत : मैं नहीं जा सकता। मैंने कभी भी महाराज से प्रतिवाद नहीं किया है। मैंने उन्हें अपना विश्वास, अपनी आस्था और अपनी भक्ति दी है। मैंने सदा उनकी रक्षा की है। मैं उनसे कैसे प्रतिवाद कर सकता हूं। कैसे पूछ सकता हूं।

वर्द्धमान : तो इस समय जाकर कम से कम उनसे यह कहो कि उसका राजगुरू मारा गया। उसका वध किया गया। और यह ब्रह्म हत्या का पाप वर्द्धमान से हुआ।

पृष्ठ भूमि में हाथी की हल्की चीत्कार उभरती है।

रक्षपाल : श्रीमान, मेरे लिए क्या आदेश है? गजेन्द्र अपनी दुर्दशा कर रहा है।

वर्द्धमान : जाओ और जाकर सभी से कहो कि राजगुरू की हत्या की गई क्योंकि वह बहुत मिथ्यावादी और हत्यारा था। उसने ही हममें महाराज के देव तुल्य होने का भ्रम उत्पन्न किया था।

भूपत : किन्तु•••किन्तु क्या इससे अशांति और विद्रोह नहीं फैलेगा?

वर्द्धमान : क्या अभी भी विद्रोह तुम्हारे लिए अनागत है, दूर है? सैनिकों की आंखों में धधकती अग्नि उनका एक दूसरे की ओर हिंसक दृष्टि से देखना विद्रोह नहीं तो और क्या है? जाओ और महाराज से कहो कि प्रत्येक सैनिक कुछ अभिलाषा लिये हमारे इस अभियान के साथ आया था, परन्तु इस काल की कोख में पहुंच कर उन्हें क्या मिला? इनमें से कौन कश्मीर लौटकर हमारे बाल बच्चों को हमारी दुर्दशा से अवगत करा सकता है?

हाथी की चीत्कार फिर उभरती है।

रक्षपाल, जाओ और जो-जो सैनिक इस समय जाग रहा होगा, उससे कहो कि अपनी रक्षा आप करे। गांठ खुल गई, अब कोई बन्धन नहीं रहा। राजगुरू के उपदेश खोटे और मिथ्या निकले और इसलिए उसकी हत्या हुई।

रक्षपाल : श्रीमान, मेरी टांगें कांप रही हैं। मेरा सारा साहस जैसे चुक गया है। में गजेन्द्र के सामने जाने से भी डरता हूं। दासों और सैनिकों से भी भय खाता हूं। लगता है कि वे अपने खड्ग निकालकर मुझे मार डालेंगे।

वर्द्धमान : (दांत पीसकर) अच्छा !

रक्षपाल : फिर भी मैं चलता हूं। मैं उनसे कहूंगा कि यहां एक ब्रह्म-हत्या हुई है ! हां ब्रह्म हत्या हुई है !!

रक्षपाल का प्रस्थान

वर्द्धमान : भूपत, जाओ और महाराज से कहो कि वर्द्धमान ने ब्रह्म-हत्या की।

भूपत : मैं महाराज के मुंह लगने में असमर्थ हूं। श्रीमान आप स्वयं जायें।

चन्द्र : यदि मेरे पांव दृढ़ होते तो मैं चला जाता। भुपत तुम महाराज से डरते हो ! बोलो, इस आयु में जब तुम्हें सुख और विश्राम की आवश्यकता थी, तुम्हारा इस सूने हिम प्रदेश में शीत से अकड़ जाना कहाँ तक उचित है ? शीत से तुम्हारे हाथों और ओठों की जो दशा हुई, क्या वह उचित है ? और इस सबका दोष तुम्हारे महाराज के सिर है। जाओ और जिन बातों से तुम मुझे इतने वर्षों सांत्वना दे रहे थे, महाराज को वही बातें चाय पिलाकर उससे कहो कि अब राजगुरू भी न रहा। उससे

पूछें कि सूर्य का उदय कब होगा ? कब हमारी मुक्ति होगी ?

वर्द्धमान : यह भी बताओ कि गजेन्द्र अपने प्राण त्याग रहा है। पता नहीं उजाला होने तक रहेगा या अभी मर जायेगा।

भूपत स्तब्ध होकर नीचे बैठ जाता हैं।

सैनिक : श्रीमान, मैं राजगुरू का अंग रक्षक था। अब मेरे लिए क्या आदेश है ?

वर्द्धमान : तुम अभी यहीं हो ? तुम जाओ और राजगुरू के शव को किसी खाई में फेंक आओ। यहाँ उसका दाह संस्कार किस से होगा ? कौन करेगा ?

सैनिक का प्रस्थान

चन्द्र : मेरी माँ का शाप फल रहा है। उसका दाह संस्कार किसने किया होगा ? उसने मुझे किस लिये चाहा था ?

वर्द्धमान : इस भयावह और अनन्त हिम विस्तार में पंगु बनकर मरने के लिए।

भूपत सहसा उठ खड़ा होता है।

चन्द्र : श्रीमान, यह आयु में हम सबसे छोटा है। हमें इसे ढाढ़स बंधाना चाहिए। सम्भव है यह उस दिन तक जीवित रह सके जिस दिन रवि निकल आएगा। रवि एक न एक दिन नकलेगा ही।

वर्द्धमान : हमने साठ पार करके यह अवस्था प्राप्त की है। परन्तु इसकी युवा बुद्धि उतनी अविकसित नहीं जितनी तुम समझ बैठे हो। जीवित रहने के लिए खान पान और पहनावा चाहिए जिसका यहां अभाव है। यह कितने दिनों जीवित रह सकता है ?

चंद्र : मै तो मरने से पहले ही मर चुका हूं। जिस सैनिक का साहस मर जाए, उसे मृत ही समझो, जिसके पांव कांपें उसे पंगु ही समझो। विकराल गिद्ध मेरी बोटी-बोटी नोच खायेंगे।

वर्द्धमान : भूपत तुम जाओ और जाकर देखो कि महाराज के पास हमारी इन बातों का क्या उत्तर है ?

भूपत : मैं नहीं समझता। इसका जो भी परिणाम होगा, मैं भोगने के लिए तैयार हूं। परन्तु मैं महाराज के मुंह नहीं लग सकता।

वर्द्धमान : अस्तु ! यदि तुम नहीं जा सकते तो क्या तुम में चन्द्र का मरना अपनी आंखों से देखने की शक्ति है ?

भूपत : मैं इसे मरने नहीं दूंगा।

वर्द्धमान : मैं अपने इस रक्तावृत खड्ग से इसे मार डालूंगा। इसकी सारी पीड़ा चली जाएगी।

वर्द्धमान खड़ग से रक्त पोंछता है। चंद्र के हाथ से शस्त्र छूट जाता है। वह पीछे हटता है।

चन्द्र : क्या !

भूपत : (दांत पीसकर) क्या ?

वर्द्धमान : भूले तो नहीं हो कि तुमने इसकी मां के सामने इसकी प्राण रक्षा का प्रण किया है ?

भूपत : नहीं भूला हूं।

चन्द्र : हाय, मैंने अपनी मां का कहना मान लिया होता। मैं इस अनजानी मौत की घाटियों में नहीं आ फंसता। किन्तु मैंने भूपत की बातों का विश्वास किया। मुझमें युद्ध लड़ने और देश-देशांतर घूमने की इच्छा जागी। महाराज की दिव्य शक्ति पर मेरी भी आस्था बढ़ गई। मुझमें भी महाराज के चमत्कार

देखने की इच्छा जागी। परन्तु सब कुछ मिथ्या सिद्ध हुआ। भूपत तुम्हारी बड़ी बड़ी बातें मिथ्या थीं।

भूपत : हां मुझे स्वयं विश्वास था। अब भी है। परन्तु मै कुछ भ्रमित भी हूं। क्या करूँ? क्या न करूँ! ओह, इस कलिकाल में मनुष्य आस्था रखे तो किस पर रखे।

वर्द्धमान : क्यों? महाराज पर! अतः जाकर महाराज से केवल एक प्रश्न पूछ कि सूर्योदय कब होगा?

भूपत : मैं महाराज के मुँह नहीं लग सकता।

वर्द्धमान : तो कर डालूँ चन्द्र की भी…?

भूपत : क्या आप सचसुच चन्द्र को मार डालेंगे?

वर्द्धमान : यम की क्रोड में रहकर भी भला मैं असत्य कहूंगा।

चन्द्र : भूपत, मेरे हाथ फिर कांप रहे हैं। हाय, क्या मैंने अब इनके हाथों ही मरना है?

भूपत : मैं जाता हूं। मैं महाराज से पूछ आऊंगा। मैं कायर नहीं। किन्तु मेरे मरने से पहले चन्द्र को कोई कष्ट न पहुंचे।

वर्द्धमान : तुम जाओ। इसकी रक्षा मैं स्वयं करूंगा।

भूपत जाने लगता है।

भूपत : हे जगदम्बा!

चन्द्र का विश्वास। वर्द्धमान भूपत को जाते देखता है। चंद्र की ओर पीठ करके वह भूपत को ही देखता रहता है। सहसा चंद्र आकर वर्द्धमान के कंधे पर अपना सिर रखकर विश्वास छोड़ता है।

वर्द्धमान : (चन्द्र की ओर मुड़कर) चन्द्र ! तुम रोते हो ? तुम्हारी आंखों मे आंसू । छी छी ! सैनिक की आंखों में आंसू नहीं तैरते वरन् रक्त के दीप जलते हैं । तुम्हें साहस से काम लेना चाहिए । यदि मरना ही हो तो एक साहसी योद्धा की मृत्यु मरना चाहिए ।

चंद्र : (भर्राए गले से) सेनापति, भूपत को महाराज के मुँह लगने के लिए न भेजिए। उसे वापस बुला लीजिए । अन्यथा बह जीवित नहीं लौटेगा,

वर्द्धमान : क्यों ? महाराज उसका क्या बिगाड़ सकता है ?

चंद्र : वह आतमहत्या करेगा । वह महाराज के मुँह नहीं लगेगा ।

वर्द्धमान : अच्छा ! यह बात है ! तुम भूपत से इतना प्रेम करते हो । ठहरो ! मैं उसे बापस भेजता हूं । महाराज के मुँह मै स्वयं लगूँगा ।

वर्द्धमान भूपत को पुकारने निकलता है ।

भूपत ! भूपत !! भूपत !!!

चंद्र द्वार की ओर एकटक देखता है जैसे किसी की प्रतीक्षा कर रहा हो। इसके साथ परदा गिरता है ।

तृतीय अंक

द्वितीय अंक का परदा गिरता है और फिर पुनः धीरे धीरे उठता है।
चंद भूपत के लौटने की प्रतीक्षा कर रहा है।

चंद्र : अब वहां कौन है ? अकेला मैं ! तो उठाऊं हाथ में यह खड्ग ?

चंद्र शस्त्र उठाता है।

चंद्र : मैं जैसे भयभीत हूं। कौन ? भूपत ? ओह ! यह वह नहीं है। यह छाया है। परन्तु किसकी छाया ? कौन है जो यहां प्रकट होकर छिप जाता है और फिर प्रकट होता है।

सावधान ! इधर मत आना। इधर ब्रह्म हत्या हुई है। ब्रह्म हत्या ! धर्मगुरू की हत्या !! अरे ! एक और भयावनी छाया ! सम्भवतः एक विकराल गिद्ध की। दूर हट——यहां से दूर हट——

शून्य में खड्ग नचाता है। जैसे अपने में खड्ग चलाने का साहस भर रहा हो।

चंद्र : मेरे हाथ में नग्न खड्ग है। जो भी यहाँ आयेगा, मैं उसे मार डालूँगा। सावधान ! कौन है ?

चंद्र खड्ग लिए द्वार पर खड़ा है। भूपत का प्रवेश। वह डाल पर चंद्र के खड्ग का वार रोक कर भीतर आता है।

भूपत : चन्द्र ! तुम यह क्या कर रहे हो ?

चंद्र : कौन ? भूपत !

भूपत : तुम किससे बात कर रहे थे ?

चंद्र : तुम सचमुच वापस आ गए !

भूपत : हां। किन्तु तुम क्या कर रहे थे ?

चंद्र : छाया काटकर फेंक रहा था।

भूपत : छाया ! कैसी छाया ?

चंद्र : यमराज की छाया। रूडित विश्वास की छाया। अच्छा है तुम लौटे। तुम्हारे बिना यहां मैं बहुत डर रहा था। यहां एक के बाद एक छाया प्रकट हो रही थी।

भूपत : छाया नहीं, तुम्हारी मिथ्या अशंका।

चंद्र : हां। मैं आशंकित हूं। क्योंकि यमराज की छाया इस द्वार से अभी भी जा रही है। और फिर एक प्रकाश भी धीरे-धीरे लुप्त हो रहा है।

भूपत : नहीं होगा। इन उलकाओं पर मली गई चर्बी भी अब जलकर समाप्त हो रही है।

चंद्र : वर्द्धमान महाराज के पास चला गया।

भूपत : चला गया ? किन्तु—

चंद्र : किन्तु क्या !

भूपत : जाने क्या देखना शेष है। हाय, शीघ्र ही प्रकाश होता !

चन्द्र : वह कैसे होगा ? जाकर देखो, मेघपटल तनिक भी झीना नहीं हुआ है।

भूपत : कुछ और क्षण धीरज धरो। अवश्य मंगल होगा।

चन्द्र : मंगल की आकांक्षा करते करते ही मैं पंगु हो गया। वह देखो—छाया !

भूपत मुड़ता है और एक सैनिक प्रवेश करता है।

भूपत : कोई हमारी ओर बढ़ रहा है।

सैनिक : सेनापति ! भूपत ! सेनापति कहां हैं ?

बाहिर कोलाहल उभरता है।

भूपत : क्यों, क्या काम है ? यह कैसा कोलाहल ?

सैनिक : भूपत ! अब क्या होगा ?

भूपत : बात क्या है ?

सैनिक : दास सैनिकों ने राजगुरू के शव के वस्त्र उतार लिए। वे शव को गाड़ने नहीं देते।

चंद्र : शुभ समाचार ! शुभ समाचार ! विद्रोह का समारम्भ ! नेत्रों में रक्त भर कर वे सब यहां आयेंगे। वे हम सबको मार डालेंगे।

भूपत : किसी ने निःसन्देह उन्हें अनुचित रूप से भयाक्रांत किया है। अवश्य किसी ने कोई कुचक्र रचा है।

सैनिक : वे भूखे कुत्तों जैसे भाग जाना चाहते हैं।

चंद्र : परन्तु भागने के लिए मार्ग कहां है ?

सैनिक : उनमें भगदड़ मच गई है। वे एक दूसरे के शरीर में कृपाण झोंक रहे हैं।

चंद्र : ओह ! वे मुझे मार डालेंगे। मैं कहां भाग सकता हूं ?

भूपत : हमारे हाथों में भी शस्त्र हैं। हम अपनी रक्षा आप करेंगे। आओ, हम किसी को भी यहां आने नहीं देंगे।

चंद्र : देखो, फिर एक छाया ! यह कौन आया ?

त्रस्त रक्षपाल का प्रवेश।

रक्षपाल : सेनापति वर्द्धमान ! सेनापति !

भूपत : वे यहां नहीं हैं। घबराओ मत ! आओ, हम स्वयं अपनी रक्षा करें।

रक्षपाल : वे कहां हैं ? उन्हें समाचार देना है।

भूपत : कैसा समाचार ?

रक्षपाल : भूपत ! गजेन्द्र ने प्राण त्याग किया। वह मर गया !

भूपत और सैनिक : ओह !!

कुछ क्षण के लिए चुप्पी।

चंद्र : मूल्यवान पशु भी चला गया। अब जीवित मनुष्यों की बारी है। हमारी बारी।

भूपत : क्या गजेन्द्र मर गया ? क्या महाराज ने सुना ? उन्हें आघात तो नहीं लगा ?

चंद्र : अब महाराज किस पर आरूढ़ होंगे ? अब उसे भी हमारी तरह पैदल ही चलना होगा।

सहसा वर्द्धमान भीतर आता है। उसके एक हाथ में रक्त-रंजित खड्ग और दूसरे में महाराज का मुकुट है।

वर्द्धमान : अब वह पैदल भी नहीं चलेगा। उसकी यात्रा का अन्त हो गया।

सभी आश्चर्य-चकित होकर वर्द्धमान की ओर देखते हैं : उसकी आकृति भयावह है।

चन्द्र : क्या ? महाराज की हत्या हो गई ?

चंद्र पीछे हटता है। भूपत वर्द्धमान पर झपटता है।

भूपत : आपने महाराज की हत्या कर डाली ?

सभी वर्द्धमान पर झपटते हैं। केवल चंद्र भागता है। वर्द्धमान चबूतरे पर चढ़ता है जिससे वह आक्रमण भी कर सके और दूसरे के आक्रमण से अपनी रक्षा भी।

वर्द्धमान : सावधान ! आगे बढ़ने की मूर्खता नहीं करना। तुम सभी यमराज के मुंह में हो। यहां से भागने का कोई मार्ग नहीं है। जाओ और जाकर देखो कि सैनिकों में परस्पर ही मार काट मची है। इस अंधकार में उन्होंने महाराज के वस्त्रों, आभूषणों और अन्य वस्तुओं को आग लगा दी है। आग की लपटें आकाश को छू रही हैं।

भूपत : परन्तु आपने उनकी हत्या क्यों की ? यदि उन्हें मारना ही था तो वह भी हमारे साथ ही मर जाते। पहले आपने ब्रह्म हत्या की और अब राज हत्या। अवश्य ही कल्पांत होगा। वज्रपात होगा। बोलिये आपने यह अनर्थ क्यों किया ? क्यों किया ?

भूपत स्तब्ध हो जाता है। कुछ क्षण जड़वत सा रहता है।

वर्द्धमान : प्रतिशोध ! प्रतिशोध ! सुना ? उसने हमें अंधेरे में रखा था। वही हमें स्वदेश से निकालकर यहां ले आया। केवल अपनी लालसा की पूर्ति के लिए। सामंत मित्र शर्मा को क्यों नहीं ले आया ? तुरुक चिकन को क्यों नहीं ? उन्हें कश्मीर में राजत्व भोगने और नगरों, मन्दिरों तथा विहारों का निर्माण करने के लिए छोड़ दिया जिससे इतिहास में उनका नाम अमर हो जाय। और हमें इस निर्जन हिम विस्तार में मरने के लिए ले आया। हमारे बाद हमारा नाम कौन लेगा ? कौन नहीं ? बोलो, कौन है जो इससे पूर्व यहाँ पहुंचा है ? हमारे यहां क्या पाया ? जब सैनिकों को खाने के लिए घास तक नहीं मिलती, मैं कौनसा मुँह लेकर उनके आगे जाता ? बोलो, महाराज की झूठी दिव्य शक्ति के भरोसे कब तक जीवित रहते ?

भूपत : किन्तु तुमने हमारे अन्नदाता, हमारे ईश्वर की हत्या की !

वर्द्धमान : यही तो भ्रम था। मैंने तुम्हारे भ्रम की हत्या की। बोलो, तुम मुझे कौनसा दण्ड देना चाहोगे ? बोलो ! मैंने अपने भ्रम को मार डाला जिस पर मैंने अपना यौवन निछावर किया। घर छोड़ा। बाल-बच्चे छोड़े।—पर हाय अब जान गया कि वह सब भ्रम था।—नहीं ....

कुछ सोचकर कहता है।

नहीं। मैंने तुम्हारे ईश्वर को अमर कर दिया। यदि वह स्वयं मरता तो तुम्हारी आस्था टूटती। मैंने उसे मारा। मैंने तुम्हारे ईश्वर को अमर कर दिया।

बाहिर कोलाहल कुछ तीव्र हो जाता है।

जाओ और बाहिर जाकर देखो कि सारे सैनिक महाराज के मरने पर उत्सव मना रहे हैं। मरणोत्सव। यह रहा महाराज का मुकुट। जो चाहे इसे सिर पर धारण करे। मैं उसे ही महाराज मान लूंगा। फिर वह जो भी आदेश देगा, मैं पालन करूंगा। लो यह रहा राजमुकुट।

मुकुट हाथ से फेंक देता है। मुकुट चंद्र के पांव के समीप आ गिरता है।

रक्षयाल : सेनापति ! यह क्या ?

वर्मर्द्धान : मुझे सेनापति मत कहो। मै अब सेनापति नहीं हूं। सेनापति वह होता है जिसके आधीन सारी सेना हो। किन्तु अब मेरे आधीन कौन है। हम सब अब स्वयं अपने-अपने स्वामी हैं। उठाओ ! मुकुट उठाओ। महाराज का राज्याभिषेक करो।

चंद्र मुकुट उठाने लगता है।

भूपत : चन्द्र !

चंद्र भूपत की ओर देखकर हाथों से मुकुट उठाता है।

वर्द्धमान : चन्द्र क्या तुम यह मुकुट सिर पर धारण करोगे ? किन्तु स्मरण रहे यह मुकुट तक्षक है। इसके हेतु तुम चाहे अपनी जान भी दे दो, यह अन्त में तुम्हें डस कर ही रहेगा।

भूपत : चन्द्र ! इसी मुकुट के पीछे हमने अपने प्राण निछावर किए। इसे मत पहनो।

सब एक दूसरे को ताकते रहते हैं।

वर्द्धमान : तो फिर कहो कौन है नया राजा ? मैं किसकी आज्ञा का पालन करूं ?

बाहिर कोलाहल और भी तीव्र हो उठता है।

वर्द्धमान : समय भाग रहा है। अभी हम सभी यहां हैं। इसके बाद होंगे, न होंगे कौन कह सकता है! चन्द्र! बोलो, क्या तुम यह मुकुट पहनोगे ?

चन्द्र : मैं इसे भूपत के सिर पर रखूंगा। इसी ने मेरे मन में विश्वास भरा। इसी के कहने पर मैं स्वदेश छोड़कर इस मुकुट की रक्षा करने के लिए यहां आया।

भूपत : मैंने कोई अनुचित कार्य नहीं किया। किन्तु मैं यह मुकुट नहीं पहन सकता। मैं आत्महत्या करूंगा। या आप ही मेरा वध कीजिए। उठाइए खड्ग और काटकर फेंक दीजिए मेरा सिर।

सिर आगे करके झुकाता है। बाहिर से "सेनापति! सेनापति!" इत्यादि पुकार सुनाई पड़ती है।

चन्द्र : वर्द्धमान ! सैनिक आपको खोज रहे हैं। वे हम सबको मारने के लिए यहीं आयेंगे !!

वर्द्धमान [: कोई मारने नहीं आएगा। हम स्वयं मर जायेंगे। मैं इनसे डरता नहीं। मैं इनके सामने जाऊंगा। रक्षपाल ! तुम भी

आओ। आओ हम और तुम इनसे पूछें कि ये चाहते क्या हैं? चलो, हम इन्हें शांत करें।

रक्षपाल, सैनिक तथा वर्द्धमान का प्रस्थान। कोलाहल बढ़ता है। भूपत खड़ा हो जाता है।

चन्द्र : भूपत ! वर्द्धमान भी अब चला गया। महाराज भी मारा गया। राजगुरू भी चल बसा। अब हमारी बारी है। भूपत, पहले मैं निकलकर अपने आपको विद्रोही सैनिकों को सौंप दूंगा।

हिमपात की पैनी ध्वनि। तूफान और गरज।

ओह ! भूपत ! यह क्या ? देखो, बाहिर एक भयानक हिम प्रभंजन बढ़ रहा है। मेरे पांव कांप रहे हैं। यह कैसी आंधी मचल रही है ? भूपत ! भूपत !! तुम कहां गए ?

प्रकाश धीरे धीरे क्षीण होता है। भूपत पीछे जाकर एक गठरी खोलता है। उलका पूरी तरह बुझ जाती है।

चंद्र : भूपत ! क्या ढूंढ़ रहे हो ? देखो बाहिर कैसा अन्धकार छा गया !

बाहिर 'क्राफ' जैसा शब्द होता है। चंद्र खड्ग और ढाल फेंक कर हाथों से अपने कान बन्द करता है।

भूपत ! देखो बाहिर आंधी से विशाल हिम खंड लुढ़क कर नीचे आ रहे हैं। शेष बचे सैनिकों की चीत्कार नहीं सुनते ?

खिसकते हिमखंड सभी सैनिकों को लुढ़काकर साथ ले गए। यदि यह पर्वतखंड भी टूटकर गिर पड़ा तो हम भी मिट्टी और पत्थरों के नीचे दब जायेंगे।

हाथों से अपना सिर थामकर चबूतरे पर बैठता है। भूपत गठरी से कोई वस्तु निकालता है।

चंद्र : भूपत ! क्या ढूंढ़ रहे हो ? अब हम भी मर जायेंगे। यह क्या है ?

भूपत एक छोटी सी मूर्ति हाथ में लेकर जैसे उसका ढक्कन खोलता है।

भूपत : मेरी जीवन यात्रा पूरी हो रही है। मुझे क्षमा करना। अब मैं तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकता।

मूर्ति में रखा विष मुंह में डालता है।

चंद्र : यह तुमने क्या खाया ?

भूपत : विष।

चंद्र सहसा उठ खड़ा हो जाता है।

चंद्र : क्या !!!

भूपत : विषकन्या की इस प्रतिमा के भीतर विष भरा था। मैं वह निगल गया। मै किसी के शस्त्र द्वारा मरना नहीं चाहता था। इस काया पर मेरी ही सांसों का भार था। मेरी आस्था का भार था। अब यह भारमुक्त हो गई।

भूपत धीरे से उठता है । बाहिर जैसे जल की बौछार हो रही हो । चंद्र भूपत की ओर बढ़ता है कि उसकी दृष्टि द्वार से बाहिर जाती है ।

चंद्र : भूपत ! यह तुमने क्या किया ? देखो बाहिर प्रलय वृष्टि हो रही है । उधर देखो !

भूपत : इसे ही कहते हैं विनाश काल ।

चंद्र : ओह ! अब हम क्या करें ? इन सभी को लुड़कते हिमखंड अपने साथ वहाकर ले गए ।

विष भूपत पर अपना प्रभाव दिखाने लगता है । चंद्र उसे अपने साथ सटाये रहता है । भूपत धीरे धीरे चंद्र की पकड़ से छूटकर धराशायी हो जाता है ।

चंद्र : भूपत ! मुझे अकेला छोड़ गए, भूपत ! !

कुछ क्षण चुप्पी ।

चंद्र : भूपन, इधर देखो । पूर्व की ओर देख लो ।

भूपत कठिनाई से सिर उठाता है ।

चंद्र : मेघपटल फट गया । सूर्य प्रकट हो रहा है । मेघों पर प्रकाश छा गया । लालिमा छा गई । देखो, वे पर्वत शिखर दिखाई दे रहे हैं । देखो सूर्य चमक रहा है !

इसी के साथ भूपत का प्रणांत होता है ।

चन्द्र : भूपत !!

चन्द्र भूपत के सिर को अपने वक्ष से लगाता है और फिर जैसे प्राणहीन टांगों पर धीरे-धीरे खड़ा हो जाता है।

चन्द्र : भूपत, अब यहाँ कौन रहा ? क्या रहा ! केवल मै हूं और मेरी छाया। और यह अर्थहीन मुकुट। हां ! ग्रंथि खुल गई। कोई बन्धन भी न रहा। सभी ने अपनी अपनी राह ली। और मैं ! मैं किस हेतु शेष हूं ? ओह, भूपत! —मैं किस लिए बचा हूं ? किस लिए हूँ ! क्यों हूँ ?

इसी के साथ परदा धीरे धीरे गिरता है।

मोतीलाल कयमू

परिचय

१९३३ : जन्म, श्रीनगर
१९५३ : बी०ए० जम्मू कश्मीर युनिवर्सिटी
१९६१-६४ : ड्रामा ट्रेनिंग (स्पेशलाइजेशन-ड्रामा-प्रोडक्शन) बड़ौदा युनिवर्सिटी

अभिनय

१९४३-४६ : बाल नाटक, नैशनल हाइ स्कूल, श्रीनगर।
१९५०-५३ : कालेज नाटक, श्री प्रताप कालेज, श्रीनगर। कलचरल कांग्रेस के नाटक—'चोर बाज़ार',, डालर साहब', 'कश्मीर यह है', तथा 'कश्मीर की राह पर'।
१९५३ : 'बोम्बुर यम्बरज़ल' आल स्टेट कलचरल कांफ्रेंस।
१९५० : 'हो होलिका' बड़ौदा युनिवर्सिटी, ड्रामा डिपार्टमेंट।

नृत्य और कोरोग्राफी

१९४३ : स्कूल रंगमंच पर।
१९५० : श्री प्रताप कालेज, श्रीनगर।
१९५१-५३ : कलचरल कांग्रेस तथा अन्य सांस्कृतिक संस्थायें।
१९५६ : एक लघु वेले "झील डलुक जीरोबम" का प्रस्तुतीकरण।
नृत्य नाटक 'शिव ताण्डव' का प्रस्तुतीकरण।
'हिमाल नागराय' ओपेरा के नृत्यों की कोरोग्राफी।
१९५७ : कत्थक नृत्य की ट्रेनिंग, बड़ौदा युनिवर्सिटी।
१९५८ : श्रीनगर में कत्थक नृत्य का कार्यक्रम।

निर्देशन

१९५८	: 'अधिकार का रक्षक' (हिन्दी)
१९५९	: 'डाकघर' (हिन्दी)
१९६०	: 'काजी जी' (हिन्दी)—द्वितीय पुरस्कार, नाटक प्रतियोगिता, जम्मू कश्मीर कलचरल अकादमी।
१९६२	: 'मूसा खान' (हिन्दी) ड्रामा डिपार्पमेंट बड़ौदा युनिवर्सिटी।
१९६४-६५	: कलचरल एकादमी के लिए 'बोम्बुर यम्बरजल' इसका प्रदर्शन केरल और तमिलनाडु राज्यों के अतिरिक्त जम्मू शहर में भी हुआ।
१९६६	: कश्मीर भगत थियटर्स के लिए 'पोज़ अपुज़' (कश्मीरी)
१९६७	: कश्मीर भगत थियटर्स के लिए 'यिति छु बनवुन' (कश्मीरी)
१९६८	: कश्मीर भगत थियटर्स के लिए 'तक़दीर' (कश्मीरी)
१९६९	: कश्मीर भगत थियटर्स के लिए 'हवस' (कश्मीरी)
१९७०	: कश्मीर भगत थियटर्स के लिए 'ज़्वलि गयम कोलि गयम कांगर" (कश्मीरी) कलचरल अकादमी के लिए 'आधे अधूरे' (हिन्दी)

A Publication of
J & K Academy of Art Culture & Languages, Jammu.